सिद्धयोग

संस्थापक : योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

वर्ष : 47
अंक : 11-12
फरवरी–मार्च 2015

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन सवाई- 283202 (आगरा) उ.प्र.

प्रकाशन तिथि – 01.02.2015

एक प्रति : रु. 20

अमृत कण

आत्मानमेव मन्येत कर्तारं सुखदु:खयो:।
तस्माच्छ्रेयस्करं मार्गं प्रतिपद्येत नो त्रसेत्।।

सुख–दु:ख का कर्ता व्यक्ति स्वयं ही होता है, ऐसा समझकर कल्याणकारी मार्ग का ही अवलम्बन लेना चाहिए, फिर भयभीत होने की कोई बात नहीं।

• • •

हितमेवानुरुध्यन्ते प्रपरीक्ष्य परीक्षका:।
रजोमोहावृतात्मान: प्रियमेव तु लौकिका:।।

परीक्षक – विवेकीजन (सारासारविचारद्वारा) ठीक–ठीक परीक्षा करके हितकर मार्ग का सेवन करते हैं, परंतु रजोगुण और तमोगुण से आवृत बुद्धि वाले लौकिक मनुष्य (हिताहित का विचार न करे तत्काल) प्रिय (मालूम होने वाले आचार आदि) का सेवन करते हैं (इसलिए दु:खी होते हैं)।

• • •

सुखार्था: सर्वभूतानां मता: सर्वा: प्रवृत्तय:।
सुखं च न विना धर्मात्तस्माद्धर्मपरो भवेत्।।

सम्पूर्ण प्राणियों की सभी चेष्टाएँ सुख– प्राप्त करने के लिए ही होती हैं और वह सुख बिना धर्माचरण के प्राप्त हो नहीं सकता, अत: धर्म में परायण रहना चाहिए।

• • •

मृत्योर्बिभेषि किं मूढ भीतं मुञ्चति किं यम:।
अजातं नैव गृण्हाति कुरु यत्नमजन्मनि।।

अरे मूर्ख (मनुष्य)! क्या तुम मृत्यु से डर रहे हो? डरे हुए को क्या मृत्यु छोड़ देती है? ऐसा समझ रहे हो तो यह तुम्हारी मूर्खता है। मृत्यु तो सबको काल का ग्रास बना देती है। वह तो जो जन्म ही नहीं लेता, उसी को नहीं पकड़ती है। इसलिए ऐसा प्रयत्न करो, जिससे पुन: जन्म ही न लेना पड़े।

• • •

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक-पत्र

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्
मर्त्योमृत्योर्मुख विवरतो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्प्राप्त्यर्थान् बहुतर विशदान् योगशास्त्रोपदेशान्
कल्याणानाम् भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

अर्थ :—शुद्ध (निर्विकार) स्वभाव वाले परम ब्रह्म का ध्यान करते-करते मृत्यु के मुख में पड़ा हुआ मनुष्य शीघ्र ही मुक्ति को प्राप्त हो जाता है। उस मुक्ति की प्राप्ति के उपाय स्वरूप योग ध्यान शास्त्र के सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या करने वाली ''सिद्धयोग'' नामक पत्रिका सत्पुरुषों के परम कल्याण की सिद्धि (प्राप्ति) में सक्षम व सहायक हो।

वर्ष : 47 फरवरी मार्च 2015 अंक : 11-12

असतां दर्शनात् स्पर्शात् संजल्पाच्च सहासनात् ।
धर्मचाराः प्रहीयन्ते सिद्धयन्ति च न मानवाः ।।

(महा. वन. 1/29)

अर्थात् दुष्ट तथा दुर्व्यसनी मनुष्यों के दर्शन से, स्पर्श से, उनके साथ वार्तालाप करने से धार्मिक आचार नष्ट हो जाते हैं। ऐसे कुसंगी मनुष्य कभी भी अपने किसी कार्य में सफल नहीं हो सकते ।।

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सथांई (एत्मादपुर) आगरा

SIDDHYOG

HINDI MONTHLY

Propagating Yoga & Spiritual values

संस्थापक :

योग-योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सम्पादक :

आचार्य (डा.) दासलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त सम्पादक : डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध सम्पादक : समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष एवं गुरु भाई–बहिन

अनुक्रमणिका

1.	विशेष लेख – *योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज*	3
2.	सम्पादकीय	8
3.	जब गुरु जी मटकी पानी लाए – श्री जगदीश राए बंसल	11
4.	योग में गुरु की अपेक्षा – डॉ. ऋषिराम शर्मा	15
5.	योग–आसन	23
6.	गुरु वन्दना – श्री रुद्रदत्त चतुर्वेदी	25
7.	लल्ला आने वाला समय योग का है – श्री अवनीश भटनागर	27
8.	श्री मद्भागवत में योग–परिचर्चा – डॉ. विजय सिंह	30
9.	सिद्धयोग मासिक का विवरण	34
10.	योग–दर्शन में 'ईश्वर–प्रणिधान' – श्री कृष्णानन्द गुप्त	35
11.	श्री रामनवमी महोत्सव	40

एक प्रति	: रु. 20.00
वार्षिक शुल्क	: रु. 160.00
द्विवार्षिक	: रु. 280.00
आजीवन (10 वर्षीय केवल)	: रु. 900.00

क्रिया–योग की साधना एवं उसका अमर फल

योग–योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

योगदर्शन के समाधिपाद में विविध प्रकार की साधनाओं का वर्णन किया है और सब साधनायें समाधि प्राप्ति के स्तम्भ हैं किंतु कौन किस साधना का अधिकारी है इसका जान लेना भी एक कठिन सी बात है। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में अधिकार – भेद का वर्णन बहुत काफी मात्रा में आता है। वस्तुतः यह ठीक भी है। अधिकार शब्द का अर्थ ही कार्यारम्भ सामर्थ्य है। जो मनुष्य अपनी योग्यता और अधिकार को देखकर कदम बढ़ाता है वह अवश्य ही अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया करता है। समाधि पाद समाप्त होने के बाद भगवान पतंजलिदेव ने साधनपाद के आरम्भ में ही क्रियायोग का वर्णन किया है। वस्तुतः क्रियायोग अधिकारी एवं अनाधिकारी का स्वतः ही निर्णय कर देता है। इसीलिए भगवान पतंजलिदेव जी ने क्रियायोग का वर्णन विशेष रूप से किया है। यदि किसी व्यक्ति को अनायास ही समाधि रूप उत्तम फल की प्राप्ति हो जाये तो वह उसकी कीमत को नहीं जानता है और कदाचित् उसको प्रयास करना पड़े तो वह जान जायेगा कि यह अनुपम लाभ कितनी मेहनत करने के बाद प्राप्त हुआ है। इसीलिए आवश्यकता है कि मनुष्य समाधिरूप अमर फल को प्राप्त करने के लिए यम–नियमों की साधना पूर्वक क्रियायोग को अपनायें। भगवान श्री पतंजलि देव ने अष्टांगयोग में वर्णित नियमों की तीन साधनाओं को क्रियायोग का रूप दिया है वह निम्नांकित है–

तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणि–धानानि क्रियायोगः।

नातपस्विनो योगः सिद्धयति, अनादि कर्मक्लेशवासना चित्ता प्रत्युपस्थित– विषयजाला चाशुद्धिर्नान्तरेण तपः सम्भेदमापद्यत इति तपस उपादानं, तच्च चित्तप्रसादनमबाधमानमनेनासेव्यमिति–मन्यते, स्वाध्यायः त्र प्रणवादिपवित्राणं जपः मोक्षशास्त्राध्ययनं वा, ईश्वरप्रणिधानं त्र सर्वक्रियाणां परमगुरावर्पणं तत्फलसंन्यासो वा।

अर्थात् जन्म–जन्मान्तर की कर्म वासना से आई अशुद्धि तप के बिना खण्डित

नहीं की जा सकती, इसलिए क्रियायोग की साधना में भगवान पतंजलि देव ने सर्वप्रथम तप को ही ग्रहण किया और वह तप भी चित्त के लिए क्लेशकर नहीं होना चाहिए। जैसे आजकल के लोग विविध साधनाओं की पूर्ति के लिए कठिन पचाग्नि तपते हैं या घोर शीतकाल में जल में बैठकर तपश्चर्या करते हैं, यह सभी साधनायें कठिन क्लेशयुक्त हैं। इसलिए तप के उस स्वरूप को अपनाना चाहिए जिसमें मनुष्य किसी प्रकार की दिक्कत को प्राप्त न हो। जो लोग क्लेशसाध्य तप करते हैं उनको भगवान ने आसुरी वृत्ति के लोग कहा है जैसे–

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः।
दम्भाहंकार संयुक्ताः कामरागबलान्विताः।।
कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः।
मां चैवान्तः शरीरस्थं तान्विद्धयासुरनिश्चयान्।

अर्थात् काम राग बल का सहारा लेकर दम्भ और अहंकार के साथ शरीरस्थ सभी भूत समूह मन और इन्द्रियों को और अन्तः शरीरस्थ मुझको आकर्षित करते हुए जो घोर तप करते हैं वे लोग आसुरी भावना के हैं। वस्तुतः तप का प्रकार क्या है इसका वर्णन भगवान श्रीकृष्ण ने तीन प्रकार से किया है। शारीरिक तप, वाङ्मय तप और मानस तप।

शारीरिक तप–

देवद्विजगुरुप्राज्ञ पूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते।।

अर्थात् देव, द्विज, गुरुदेव एवं बुद्धिमान लोगों का पूजन नम्रता, शुद्धि रखना कठिन ब्रह्मचर्य वृत का पालन करना एवं मन, वचन कर्म से किसी को भी दुःख न देना यह शारीरिक तप कहलाता है। जो परमोत्कृष्ट है।

वाङ्मय तप–

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते।।

अर्थात् मीठा और सत्य दूसरों को हितकारी वचन बोले और स्वाध्याय का अभ्यास करे इसी को वाङ्मय तप कहा गया है। मानस तप गीताकार ने इस प्रकार

बतलाया है–

मानस तप–

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो – मानसमुच्यते।।

अर्थात् मन की प्रसन्नतापूर्वक सौम्यभाव से मनोनिग्रह करते हुए अन्तःकरण की शुद्धि के लिए जो तप किया जाता है वह ठीक रूप से मानस तप कहलाता है। उसमें भी अहंकार को छोड़कर व फल की इच्छा को छोड़कर जो तप करते हैं वह तप सात्विक कहलाता है। इसके अतिरिक्त सत्कार, मान, पूजार्थ और दम्भ के लिए तप किया जाता है वह राजस तप कहलाता है। इसके अतिरिक्त मूढ़तापूर्वक कठोर आग्रह पूर्वक शरीर और मन को पीड़ा देते हुए या दूसरों को नष्ट करने के लिए जो तप किया जाता है वह तामस कहलाता है। भगवान ने ऐसे घोर तपों को छोड़ देना ही उचित समझा है। जो मनुष्य यथार्थ में तपस्वी है वह शास्त्रोक्त फल का भागी अवश्य हो जाया करता है। भगवान पतंजलि देव तप का फल इस प्रकार लिखते हैं –

कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः।

अर्थात् तप के द्वारा अशुद्धि नाश हो जाने पर योगी को कायिक सिद्धि अणिमा, महिमा, गरिमा आदि एवं ऐन्द्रिय सिद्धि दूरदर्शन, दूरश्रवणादि अनायास ही प्राप्त हो जाती हैं। जिस व्यक्ति को योग के अष्टविधि ऐश्वर्य अणिमादि एवं दूरदर्शन, दूरश्रवणादि ऐन्द्रिय सिद्धियों की प्राप्ति हो जायेगी वह तो कृतकृत्य हो जायेगा। इसलिए क्रियायोग को साधना व सिद्धि के लिए तप बहुत ही आवश्यक है। उसके साथ–साथ क्रियायोग के अन्तर्गत दूसरी साधना स्वाध्याय की है। शास्त्रोक्त विधि से स्वाध्याय के दो भाग माने गये हैं –

प्रणवादि पवित्राणां जपः स्वाध्यायः मोक्षशास्त्राणां अध्ययनं वा स्वाध्याय।

अर्थात् प्रणव आदि पवित्र नामों का जप करना व मुक्तिदाता शास्त्रों का पाठ करना स्वाध्याय कहलाता है। हमारा शास्त्रीय सिद्धान्त है –

स्वाध्यायाद्योगमासीत् स्वाध्यायाद्योग मामनेत्।
स्वाध्याय योग सम्पत्या परमात्मा प्रकाशते।।

अर्थात् स्वाध्याय के प्रभाव से साधक योग ध्यान को प्राप्त करे और ध्यानस्थ हो जाने के बाद स्वाध्याय का मनन करे। अर्थात् स्वाध्याय के ध्येय अर्थ का चिन्तन

करे। स्वाध्याय और योग ध्यान से जो शक्ति–संचय होगी उसके फलस्वरूप परमात्मा का प्रकाश हो जायेगा।

स्वाध्याय के प्रकार –

स्वाध्यायशील व्यक्ति को चाहिए कि प्रथम अपने इष्टदेव के स्तोत्र का जाप करे। और स्तोत्र जाप के पाठ के अनन्तर गुरु–प्रदत्त अपने मन्त्र का वाणी से जाप करे। वाणी से दो या तीन घण्टे का जाप करे। तीन घण्टे वाणी से जाप कर लेने के बाद फिर वह मन्त्र मन में होने लगता है, और तीन घण्टे मानस जप करने के बाद फिर वह मन्त्र बुद्धि में प्रवेश कर जाता है। और मन्त्र के बुद्धि में प्रविष्ट हो जाने के बाद स्वतः ही समाधि का प्रकाश हो जाता है। इसी कारण स्वाध्याय समाधि का प्रकाशक है। योगदर्शन में स्वाध्याय का फल निम्नांकित सूत्र में लिखा है –

स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः।

देव, ऋषयः, सिद्धाश्च स्वाध्यायशीलस्य दर्शनं गच्छन्ति, कार्ये चास्य वर्त्तन्त इति।

अर्थात् देवता लोग, ऋषि लोग और सिद्ध लोग स्वाध्यायशील व्यक्ति की आँखों के सामने जाया करते हैं और उसके काम कर दिया करते हैं। ये स्वाध्याय का उत्तम परिणाम है। स्वाध्याय की पराकाष्ठा बढ़ जाने के बाद मनुष्य के मन में अपने आप ही प्रकाश का उदय हो जाता है। और स्वाध्याय के फलस्वरूप ज्योंही समाधि मार्ग में प्रवेश करता है तो–

सर्व द्वारेषु देहेऽस्मिन् प्रकाश उपजायते। ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्वमित्युत।।

अर्थात् जिस समय मनुष्य के मन में एवं शरीर में, सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश की अनुभूति हो उस समय यह समझ लेना चाहिए कि पूर्ण सत्व का उदय हो गया है और सत्वोदय हो जाने के बाद सतोगुण के फलस्वरूप महाभाव का उदय हो जाता है। महाभाव में मनुष्य स्वतः ही अपने इष्टदेव को आत्मसमर्पण कर देता है। गीता में भगवान कृष्ण ने आत्म–समर्पण के भाव को समझाते हुए ये शब्द कहे हैं–

यत्करोसि यदस्नासि यज्जुहोसि ददासियत्।
यत्तपश्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्वमदर्पणम्।।

अर्थात् हे अर्जुन जो भी कुछ तुम करते हो और जो कुछ तुम खाते हो, जो कुछ

तुम हवनादि करते हो और जितनी तुम तपश्चर्या करते हो वह सब कुछ मुझे सौंप दो। भगवान ने ये शब्द अर्जुन को आदेशात्मक कहे है किंतु सच्चा आत्म-समर्पण बिना योग के हो ही नहीं सकता और जो मनुष्य स्वाध्याय के बल से योग को प्राप्त हो जाता है और जब उसके अन्दर पूर्णरूपेण महाभाव का उदय हो जाता है तो उसको स्वाभाविक ही ईश्वर प्रणिधान हो जाया करता है और ईश्वर प्रणिधान हो जाने पर स्वत: ही समाधि सिद्ध हो जाती है पढ़िये भगवान पतजलिदेव के शब्द और उन पर व्यासदेव जी का भाष्य –

समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात्।

ईश्वरार्पितसर्वभावस्य समाधिसिद्धि : यथा सर्वमीप्सितमवितथं जानाति, देशान्तरे, देहान्तरे, कालान्तरे च ततोऽस्य प्रज्ञा यथाभूतं प्रजानाति।

अर्थात् ईश्वर आदि महासिद्ध है, यदि कोई व्यक्ति ईश्वर को आत्म-समर्पित करता है तो भक्ति समाधि सिद्ध हो जाती है। इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि साधक को अपना जीवन उत्कृष्ट बनाने के लिए क्रिया योग का अवलम्ब लेना बहुत ही जरूरी है। इस साधना को करता हुआ साधक यदि अपने युक्ताहारविहार आदि के नियमों को पूर्णरूपेण परिपक्व रखता है तो वह अवश्य ही योग के अन्तिम निष्कर्ष समाधिरूप अमरघर को प्राप्त करता है जिसको प्राप्त करके फिर कुछ भी प्राप्तव्य शेष नहीं रहता है।

● ● ●

विदेशेषु धनं विद्या व्यसनेषु धनं मतिः।

परलोके धनं धर्मः शीलं सर्वत्र वै धनम्।।

'परदेश में विद्या, विपत्ति में सद्बुद्धि, परलोक में धर्म धन (सहायक) है, परंतु शील-सदाचार तो ऐसा धन है, जो लोक और परलोक दोनों में साथ देता है।' इस प्रकार शील सार्वभौम सुख का साधन है।

सिद्धयोग - हमारी प्यारी पत्रिका

– योगाचार्य डॉ. दासलाल ब्रह्मचारी

प्रिय पाठकगण / गुरु भाई–बहिन,

जय गुरुदेव की!

क्षण–क्षण स्मरणीय गुरुदेव योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के संकल्प से प्रकट कल्पवृक्ष के रूप में हमारी पत्रिका 'सिद्धयोग' अपनी आयु के 47 वर्ष पूरा करके अप्रैल विशेषांक के साथ ही 48वें वर्ष में प्रवेश पा रही है। श्री गुरुदेव भगवान ने इस पावन वृक्ष का आरोपण सन् 1968 में किया था, जिसका एकमात्र लक्ष्य था कि योग जिज्ञासु इसके माध्यम से योग तत्व व सिद्धान्त को समझ लें जिससे योग मार्ग पर चलकर आध्यात्मिक उन्नति के चरम लक्ष्य की ओर वे चल सकें। आज के इस विकासशील युग में भौतिक उन्नति के साथ–साथ धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में भी जागरूकता आ गयी है। इसी क्रम में धार्मिक व आध्यात्मिक पत्र–पत्रिकाओं का भी समाज में व्यापक प्रचार कार्य चल रहा है। किन्तु 'सिद्धयोग' जिस प्रकार से योग के सैद्धान्तिक दुरूह व दुर्बोध्य पक्ष को अत्यन्त सरल भाषा में बोधगम्य बना देती है ऐसा दूसरी पत्रिकाओं में देखने को नहीं मिलता।

'सिद्धयोग' गुरुदेव से सम्पर्क बनाये रखने का सक्षम माध्यम रही है। साधक घर बैठे ही गुरुदेव के उपदेश एवं आज्ञाओं का संकेत पा जाया करते हैं। पत्रिका के माध्यम से भी गुरुदेव की आत्मिक शक्ति का संचार शिष्यों में होता रहता है। साधकों के मन में उठने वाले संशयों का निवारण भी इससे हो जाता है।

वेदान्त प्रक्रिया में आत्म दर्शन की ओर चलने के साधन के रूप में तीन अंगों का वर्णन किया गया है। वेदान्त का सिद्धान्त है – *आत्मा वा अरेद्रष्टव्यः, श्रोतव्यः मन्तव्यः निदिध्यासितव्यः।* अर्थात् आत्मा का दर्शन करना चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम श्री गुरुदेव के मुख से आत्म तत्व के विषय में श्रवण करना चाहिए। श्रवण करने के पश्चात् मनन करना चाहिए। ठीक प्रकार से मनन हो जाने पर निदिध्यासन में बैठना चाहिए। निदिध्यासन ही योग की भाषा में ध्यान–योग का अभ्यास कहलाता है। श्री गुरुदेव जब शिष्य को उपदेश करते हैं तो शब्द के माध्यम से शिष्य पर शक्ति संचार होता है। योग के ग्रन्थों में शक्तिपात की अनेक प्रकार की दीक्षाओं का वर्णन मिलता है। इनमें संकल्प दीक्षा, स्पर्श दीक्षा, दृग दीक्षा, हार्द दीक्षा आदि दीक्षाओं का वर्णन है। गुरुदेव दीक्षा दान के समय गुरुमन्त्र के माध्यम से शिष्य के दाहिने कर्ण में शक्ति का संचार करते हैं। आनन्दकन्द श्री गुरुदेव भगवान् ने 'सिद्धयोग' परम्परा को अक्षुण्ण रखा है। सिद्धयोग के पठन से कोई भी योग जिज्ञासु योग की परिभाषा, स्वरूप, विधि एवं लक्ष्य समझ सकता है। श्रद्धालु साधकों में सिद्धयोग के माध्यम से ही गुरुदेव के दर्शन एवं कृपालाभ होते देखा गया है। जीवन से परेशान कई व्यक्तियों को सन्मार्ग मिला और जीवन की धारा ही बदल गयी। पत्रिका के

पठन–पाठन एवं अनुशीलन से उत्साह, उल्लास एवं मार्गदर्शन मिलता है। योग शास्त्र अत्यन्त गहन है, इसके दुरूह विषयों को समझना बहुत कठिन है, किन्तु सिद्धयोग ने इसे अत्यन्त सरल एवं सुबोध्य बनाया है। पत्रिका का अध्ययन साधक के अन्दर श्रद्धा का बीज बो देता है। जिसे योग साधना की नींव माना गया है। जिसमें सम्यक् श्रद्धा नहीं है, वह विनष्ट हो जाता है। भगवान के गीता में वचन है– **'संशयात्मा विनश्यति'** अर्थात् संशय युक्त व्यक्ति पथभ्रष्ट होकर पतन की ओर चला जाता है। इसलिए 'सिद्धयोग' श्रद्धा एवं स्वाध्याय का अचूक साधन है। साधक को स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करना चाहिए। गुरुदेव अपने शिष्यों को उपदेश करते हुए कहते हैं कि – **'स्वाध्यायाद् मा प्रमदितव्यम्'** अर्थात् स्वाध्याय में कदापि प्रमाद नहीं करना चाहिए। गुरुमन्त्र का जाप भी उत्तम श्रेणी का स्वाध्याय है, इसमें प्रमाद या लापरवाही नहीं करनी चाहिए। अस्तु।

पत्रिका के लिए, गुरुदेव के समय से ही, किसी प्रकार की विज्ञापन आदि सामग्री प्रकाशनार्थ स्वीकार कर वित्तीय आय जुटाने अथवा सहायता प्राप्त करने का उद्देश्य नहीं रहा है, वह आज भी यथावत् है। 25–30 हजार रुपये का वार्षिक घाटा सहन करके भी पत्रिका अवाध गति से प्रकाशित हो रही है, यह सब पूज्य गुरुदेवजी की कृपा का ही फल है। उदारमना गुरुभाई–बहिनों के आर्थिक सहयोग से घाटे की पूर्ति हो जाती है।

अन्त में, मैं उन सभी मनीषी विद्वान लेखकों एवं रचनाकार कवियों के प्रति आभार प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, जिनके उत्कृष्ट योगपरक लेख एवं सारगर्भित रचनाओं से पत्रिका की महत्ता व शोभा बनी हुई है। मैं उनसे इसी प्रकार अपनी रचनायें, लेखादि निरन्तर भेजते रहकर स्नेह भाव बनाये रखने का नम्र अनुरोध करता हूँ। पत्रिका के पाठकों व ग्राहकों से भी निवेदन करूँगा कि वे नियमित ग्राहक बने रहें तथा कम से कम 5 नये सदस्य अवश्य जोड़ें। इस दिशा में गंगापुर मंडल, कानपुर मंडल व सहारनपुर मंडल के साधकों का प्रयास वस्तुतः स्तुत्य है। इस अंक के साथ ही वार्षिक ग्राहकों का शुल्क समाप्त हो रहा है, अतः समय पर आगामी वर्ष के लिए शुल्क भेज दें। वार्षिक शुल्क रु. 170/– हो गया है तथा आजीवन शुल्क रु. 1000/– हो गया है।

आप सभी के लिए आने वाला वर्ष मंगलमय हो।

आनन्दकन्द श्री प्रभु जी का परम पावन प्राकट्य दिवस श्री रामनवमी योग महोत्सव के रूप में सवाई आश्रम, आगरा में बड़े हर्षोल्लास व धूमधाम से मनाया जायेगा, सभी श्रद्धालु भक्त उसमें सम्मिलित होकर श्री प्रभु जी की कृपा कोर को पाकर जीवन को धन्य बना लें। इस अवसर पर श्री प्रभु जी के चरणों में सभी भक्तों का कोटि–कोटि नमन है।

श्री रामनवमी योग महोत्सव दिनांक 26, 27 व 28 मार्च, 2015 को मनाया जाना निश्चित हो चुका है।

सभी गुरु भक्तों को चाहिये कि श्री रामनवमी को पवित्र उत्सव पर धाम पर पहुँचें तथा गुरुदेव की कृपा को प्राप्त करें। जो यह मानते हैं कि गुरुदेव तो है नहीं वहाँ जाकर क्या करेंगे यह उनकी महान भूल है। गुरुदेव की शक्ति तो अनवरत बरसती रहती है। गुरुदेव कहा करते थे कि श्री

सिद्धगुफा से ही सारी दुनियाँ को योग का प्रकाश मिल रहा है। अतः सभी आश्रम की शाखाओं के संचालकों को चाहिये स्वयं भी आवें और गुरु भक्तों को पवित्र धाम के दर्शन करावें ताकि योग ध्यान में उन्नति हो।

सभी को जय सद्गुरुदेव की।

आपका

डॉ. दासलाल योगाचार्य

संपादक सिद्धयोग

● ● ●

'सब प्रकार से परमात्मा के ही शरण'

लज्जा, भय, मान, बड़ाई और आसक्ति को त्याग कर एवं शरीर और संसार में अहंता, ममता से रहित होकर केवल एक परमात्मा को ही परम आश्रय, परमगति और सर्वस्व समझना तथा अनन्य भाव से अतिशय श्रद्धा, भक्ति और प्रेमपूर्वक निरन्तर भगवान् के नाम, गुण, प्रभाव और स्वरूप का चिन्तन करते रहना एवं भगवान् का भजन, स्मरण रखते हुए ही उनके आज्ञानुसार कर्तव्यकर्मों का निःस्वार्थ भाव से केवल परमेश्वर के लिए आचरण करना यह 'सब प्रकार से परमात्मा के ही शरण' होना है।

जब गुरु जी मटकी पानी लाए

– श्री जगदीश राए बंसल " अधम ", नई दिल्ली

त्रय जग पावन, ब्रह्माण्ड नायक, योग योगेश्वर महा प्रभू श्री राम लाल जी महाराज एवं अखण्ड मण्डलाकार आनन्द कन्द योगीराज गुरू देव श्री चन्द्र मोहन जी महाराज अपने लाड़ले बच्चों पर हर जगह, हर समय कोई भी विपत्ति आने पर अपनी कृपा के बादल हम पर बरसाते ही रहते हैं। भले ही हम उस समय गुरू देव को याद कर पाएँ अथवा चूक जाएँ। ये कृपाएँ चाहे पानी में डूबने से बचाने की हों या आग की लपटों से बचाने की हों या उग्रवादियों के चंगुल से छुड़ाने की हों या सरपट दौड़ती रेलगाड़ी के पहिये से बचाने की हो अथवा अन्य किसी दुर्घटना से प्राण रक्षा की हों, गुरू देव भगवान अवश्य–अवश्य कृपा करते हैं। ऐसा शायद ही कोई गुरु भाई ढूंढा मिलेगा जिस पर पतित पावन की कृपा ना हुई हो।

इसी प्रकार का एक कृपा प्रसंग श्री सिद्ध गुफा सवाई धाम से अटूट निष्ठा रखने वाले अपने आराध्य देव श्री चन्द्र मोहन जी महाराज के विशेष कृपा पात्र, जिसे गुरू जी "ओ भाई" कह कर भी पुकार लेते थे, हरियाणवी परिवार के मुखिया नई दिल्ली निवासी–72 वर्षिय आदरणीय गुरु भाई श्री रामनारायण तायल ने बतलाया कि मैंने अपनी अर्धांगिनी श्री मती किशनी देवी सहित सन् 1971 में देश की महानगरी दिल्ली में योग योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज से दीक्षा लेने का सौभाग्य प्राप्त किया था। तब से आराध्यदेव जी की शीतल छत्र–छाया में अपने समस्त हरे भरे परिवार के साथ आनन्द मय जीवनयापन कर रहा हूँ।

प्रस्तुत जीवन रक्षक प्रसंग अभी हाल का ही है। संयोग कुछ ऐसे बना कि मैं अपनी भार्या के संग दिनांक 25 मई 2014 को एक शुभ विवाह में शामिल होने के लिए देहली से हवाई मार्ग द्वारा बेंगलूर गया था। मेरा सुपुत्र बसन्त तायल अपने परिजनों सहित पहले ही उक्त शादी में पहुँच चुका था। त्रिलोक अनाथ नाथ की कृपा से शादी बड़े धूम–धाम के साथ सम्पन्न हो गई। अगले दिन 26 मई को मैं अपनी धर्मपत्नि सहित देहली लौट आया और मेरा पुत्र बसन्त अपने परिजनों सहित इनोवा कार द्वारा श्री रामेश्वरम् धाम के दर्शनार्थ चला गया। श्री रामेश्वर पहुँच कर उसने सभी मन्दिरों का दर्शन पूजन का लाभ लिया और प्रार्थना किया कि हे विश्वनाथ आशुतोष भगवान हमें यह आशीर्वाद देने की कृपा करें कि सर्व समर्थ अन्तर्यामी सिद्ध शिरोमणी गुरुदेव श्री चन्द्र मोहन जी महाराज के श्री चरणों में सदैव हमारी प्रीती दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती रहे। तत्पश्चात अगले दिन 27 मई को उन्होंने वापिस बेंगलूर लौटने का मन बनाया। अतः उसी कार द्वारा हाई वे से अपनी यात्रा आरम्भ किए। मार्ग में जब वे अपने गन्तव्य पर पहुँचने से मात्र 80–90 मील की दूरी पर ही थे कि कोई कलिष्ट संस्कार का उदय हो आया। हुआ यह कि अपनी मस्त चाल के चलते, अचानक कोई अज्ञात वाहन मेरे लड़के की इनोवा को

ठोंक मार कर फरार हो गया। परिणामत: कार में सवार ड्राईवर सहित सभी बेहोश हो गए। अगली सीट पर बैठे मेरे पुत्र बसन्त का मुंह सामने कार के डैस बोर्ड से उसी स्पीड के साथ जोर दार टकरा गया। उसने बैल्ट का प्रयोग भी नहीं कर रखा था। पिछली सीट पर बैठे – उसकी पत्नी, भतीजा नितिन – जिसकी शादी छ: जून 2014 को और सुपुत्री रेखा, जिसकी शादी छ: जुलाई के लिए निर्धारित थी, सभी पाँचों बेहोश हो गए।

एक अन्तराल पश्चात सर्वप्रथम मेरी पुत्र वधु की चेतना लौटी। उसको स्थिति समझते देर न लगी। अत: आनन फानन में अगली सीट पर झुककर अपने पति बसन्त को डैस बोर्ड से उठाने का प्रयत्न किया तो उसका बांया हाथ बसन्त के चेहरे पर लगते ही रक्त रंजित हो गया। वह बहुत घबरा गई मगर साहस करके सड़क पर सरपट दौड़ते वाहनों से हाथ जोड़ कर सहायता के लिए बार–बार चिल्लाई कि :–

बचाओ............बचाओ.............मेरे पति को बचाओ..........................

अगले ही क्षण सर्व व्यापी, अन्तर्यामी गुरुदेव भगवान से गुहार लगाई

गुरु...............दे............ऐ...........ऐ व – गुरु...दे...ऐ...ऐ व.........

लाचार दिल पर क्या गुजरी, कोई अनजान क्या जाने।
दुख दर्द जिसे होता है, कोई नादान क्या जाने ।।

कारों की भगदड़ से किसी को रहम नहीं आया तो पुकारी :–

गुरु देव हम पर दया करो
मेरे पति का उपचार करो।

पुत्र मेरा बेहोश पड़ा है
भतीजा मेरा लुढक रहा है
ड्राईवर नहीं कुछ बोल रहा है
आ करके अभय करो।

गुरु देव.........

यहाँ पर नहीं कोई सुनने वाला
वाहन नहीं कोई रहमत वाला
आप बिन नहीं कोई रखवाला
हे कृपालु कृपा करो।

गुरु देव.........

सुनसान जगह में खड़ी हुई हूँ
भारी आफत में पड़ी हुई हूँ

दया की भीख मैं माँग रही हूँ

इस संस्कार का भुगतान करो।

गुरु देव............

सुन कर आर्त पुकार – गुरु जी आते हैं।

कर दें शक्ति संचार – जब लल्ला बुलाते हैं।।

इसी उहा पोह में चलते एक सज्जन अधेड़ उम्र, गठीला शरीर, धोती–कुर्ते वाले, हाथों में पानी मटकी ले कर आए। उन्होंने अपने ही कर कमलों द्वारा बसन्त के चेहरे से खून धो डाला। इस क्षण मेरी पुत्र वधु बेंगलूर, दिल्ली आदि फोन करने में उलझी रही। वे सज्जन ये कहते लो सुने कि पानी मत पिलाना। मगर देखते ही देखते कहाँ अदृश्य हो गए? न वहाँ पुज्यवर, न मटकी, न पानी।........?

आप समझ ही गए होंगे कि वे सज्जन कौन थे, जी हाँ– ये वही थे जो कभी सर्जन बन कर आते हैं, कभी न्यायधीश बन कर आते हैं, कभी मुल्ला बन कर आते हैं, कभी दरोगा बन कर आते हैं, कभी गार्ड बन कर आते हैं और न जाने परोक्ष अथवा अपरोक्ष किन–किन रूपों में आकर सहायता कर जाते हैं। ऐसे अन्तर्यामी, सर्व समर्थ, योग योगेश्वर गुरुदेव श्री चन्द्र मोहन जी महाराज को कोटि–कोटि दण्डवत प्रणाम।

अन्तर्यामी तुम एक हो–आत्मा के आधार।

जो तुम छोड़ो हाथ तो–कौन उतारे पार।।

अब यह बात पूर्णतया समझ में आ जाती है कि गुरु देव जी हर समय, हर स्थान पर, हर बच्चे के साथ रहते हैं। इतने में ही एक यातायात पुलिस गाड़ी घटना स्थल पर आ कर रुकी और शीघ्रातिशीघ्र बसन्त को निकटतम प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर ले गई। यह गाड़ी आना भी गुरु कृपा ही रही होगी। इधर कार में एक–एक सभी की चेतना लौट आई। फिर एक सीमित अन्तराल पश्चात धांय–धांय करती एक एम्बूलैन्स बेंगलूर से आ पहुँची। आनन फानन में मरीज को बेंगलूर ले जा कर दाखिल कर दिया गया। वहाँ चिकित्सकों ने इलाज में कोई कोर–कसर नही छोड़ी और बसन्त को खतरे से बाहर घोषित कर दिया। (खतरे से बाहर तो उसी समय समझ लेना चाहिए था जब प्राण दाता जी ने अपने कर कमलों से मुख साफ कर दिया था)। इस वार्तालाप के मध्य बसन्त की माँ देहली से अस्पताल यह प्रार्थना करते–करते पहुँच गई कि :–

प्रभू रामलाल वन्दना–गुरु चन्द्र मोहन वन्दना

सिद्ध गुफा संवाई की–बार बार वन्दना

संवाई धाम वन्दना–अलुपुर धाम वन्दना

नैपाल वासी प्रभू की–बार बार वन्दना

बसन्त ने कहा मेरी दुर्गा माँ आ गई, माँ प्रणाम। यह मातृत्व में विश्वास, की अंगड़ाई जान पड़ती है। क्योंकि :–

जो मस्ती आँखों में है–वो महफिलों में नहीं

जो अमीरी दिल में है–वो महलों में नहीं

शीतलता पाने को कहाँ भटकता है प्यारे,

जो माँ की गोद में है–वो हिमालय में नहीं।।

अब परिजनों के आग्रह से 30 मई को डाक्टरों ने बसन्त को देहली के श्री बाला जी एकशन मेडिकल इन्सटिट्यूट में रैफर कर दिया। यहाँ इसके चेहरे पर छोटी–छोटी स्टील की कई प्लेटें तो लगी मगर हुलिए में कोई अन्तर नहीं पड़ा। शेष परिजनों में किसी को खरोंच तक नहीं आई। गुरु कृपाओं का मैं क्या बखान कर सकता हूँ। शेषनाग भी थक जाएँगे। अतः मैं तो बस यही गाता रहूँगा कि :–

बंदऊँ गुरुपद पदुम परागा–सुरुचि सुबास सरस–अनुरागा।

अमिय मूरिमय चूरन चारू–शमन सकल भवरुज परिवारू।।

●●●

आवश्यक सूचना

सिद्धयोग के वार्षिक ग्राहकों से निवेदन है कि उनका वार्षिक शुल्क मार्च के अंक के साथ ही समाप्त हो रहा है। अतः आगामी वर्ष के लिये 170 रु का M.O. प्रेषित करें या भिजवा दें ताकि समय पर आपको अप्रेल विशेषांक भेजा जा सके। साथ ही कम से कम नया सदस्य बनावें। यह पुनीत कार्य गुरुदेव के अन्तर्गत ही होगा।

अतः अपना शुल्क अवश्य–अवश्य व शीघ्र भेजें।

– आचार्य दासलाल

व्यवस्थापक/सम्पादक 'सिद्धयोग'

योग में गुरु की अपेक्षा

– श्री डॉ. ऋषिराम शर्मा

शब्दों में श्री सद्गुरू भगवान के स्वरूप की महिमा की अभिव्यक्ति संभव नहीं है क्योंकि वह तो परमात्मा के भी प्रणाम्य तथा अनन्त स्वरूप हैं। जिस प्रकार गूंगा व्यक्ति मीठे फल का रसास्वादन कर आनन्द में मग्न तो हो जाता है किन्तु उसका वर्णन नहीं कर सकता उसी प्रकार गुरु–कृपा प्राप्त भाग्यवान पुरुष योगामृत का रसास्वादन कर अन्दर ही अन्दर सत्गुरु–चरणों के प्रेम में विभोर तो रहता है किन्तु उसकी अभिव्यक्ति करने में अपने को सर्वथा असमर्थ पाता है। जब–जब वह यह सोचता है कि मुझ पर मेरे गुरुजी कितने कृपालु हो गये है तब–तब वह उनकी महिमा का वर्णन करना तो चाहता है किन्तु अवाक् रह जाता है। बस एक नमस्कार शब्द ही उसके पास रहता है और वही उसके मुख से स्वत: निकल पड़ता है। वह मन की वीणा, उठाकर गाने लगता है –

अखण्डमण्डलाकार व्याप्तं येन चराचरं
तत्पद दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नम:।
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु: गुरु साक्षात्महेश्वर:
गुरुरेकं परम ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नम:।
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानांजन शलाकया
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरुवे नम:।

अर्थात् जिन गुरुदेव ने मुझे सर्वव्यापी अखण्डमण्डलाकार स्वरूप का साक्षात्कार करा दिया उनको मेरा नमस्कार है। जो गुरुदेव ब्रह्मा, विष्णु और शिव के विशुद्ध स्वरूप है उनको मेरा नमस्कार है। जिन गुरुदेव ने मायावी अन्धकार अज्ञान से अन्धी हुई मेरी आँखों में ज्ञान रूपी अंजन लगाकर ज्योति ला दी अर्थात् आन्तरिक योग–दृष्टि का प्रकाश दे दिया उन गुरुदेव को मेरा नमस्कार है।

'गुरु' शब्द का अर्थ है कि जो माया–जनित अज्ञानान्धकार का नाश कर योग जनित ज्ञान का प्रकाश करा दे। अर्थात् जिनकी कृपा से अन्तर अनुभूतियों का प्रकाश होने लगे। बिना गुरु की कृपा के किसी को योग सिद्धि नहीं होती । भगवान सदाशिव जी ने भी वामदेव को उपदेश करते हुए अमनस्क खण्ड में कहा है कि–

वेदान्ततर्कोक्ति भिरागमैश्च
नानाविधै: शास्त्र कदम्ब कैश्च
दानाद्यिभि: सत्करणैर्नगम्यं
श्चिंतामणि हर्यैकगुरु–विहाय।।

अर्थात् तत्ववेत्ता गुरु के बिना केवल वेदान्त तर्क मीमांसा तथा श्रुतियों के अध्ययन से किसी को योग रूपी चिन्तामणि की प्राप्ति नहीं हो सकती। अपने मन से कोई चाहे कितना भी पुराणादि शास्त्रों का अध्ययन करता रहे अथवा प्राणायामादिक हठयोग के साधनों का अथवा ध्यान का अभ्यास करता रहे किन्तु जब तक गुरु की कृपा नहीं होती तब तक योगसिद्धि नहीं मिलती। श्रुतियों में भी इसको और अधिक पुष्ट कर दिया गया है कि–

" आर्चायवान् पुरुषो वेद "

(छांदोग्य उपनिषद्)

अर्थात् जिसको सद्गुरु की प्राप्ति हो गयी है वही पुरुष योग के रहस्यों को जान सकता है अन्यथा नहीं।

व्यावहारिक दृष्टि से भी तैराकी में निपुण व्यक्ति ही तैरना सिखा सकता है तथा डूबते हुये को बचा सकता है। यदि कोई पुरुष पुस्तकों में तैरने की क्रियाविधि का ज्ञान प्राप्तकर तीव्रगामी नदी में तैरने का दु:साहस कर कूद पड़े तो उसके दुष्परिणाम ही निकलते है। योग की रहस्यमयी विद्या तो केवल अनुभव गम्य है, वह तो अनुभवी सिद्धयोगी की कृपा से ही मिल सकती है।

इसीलिये स्कन्दपुराण में कहा है कि –

आचार्याद्योग सर्वस्यमवाप्य
स्थिरधी: स्वयं।
यथोक्तं लभेत तेन
प्राप्नौत्यपि च निर्वृतिम्।।

(स्कन्दपुराण)

अर्थात् गुरु से योग के रहस्य को जानकर ही दृढ़मति पुरुष गुरु द्वारा निर्दशित योगाभ्यास में लग जाय तभी उसको स्वयं ही योग–सिद्धि प्राप्त होती है जिसको पाकर परम शान्ति मिलती है।

कभी–कभी योग की विभूतियों से आकृष्ट होकर पुरुष गुरु के बिना ही पुस्तकों में पढ़कर अपने मन से ही प्राणायाम आदि क्रियायें करने लग जाते हैं और फलस्वरूप कुष्ठादि व कासस्वासादि रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं। इसलिए हठयोग प्रदीपिका में स्पष्ट चेतावनी दे दी गयी है कि –

हठान्निरुद्ध: प्राणोऽयं
रोमकूपेषु नि: सरेत्।
देहं विदारयत्येष
कुष्ठादि जनयत्यपि।।

ततः प्रत्याथित व्योसौ
क्रमेणारण्य हस्तिवत्।।

(हठयोग प्रदीपिका)

अर्थात् बिना गुरुनिर्देशित क्रम के विपरीत हठ पूर्वक यदि कोई प्राण का निरोध करता है तो प्राण उसके रोमछिद्रों से बाहर निकल जाता है और शरीर को विकृत कर देता है तथा कुष्ठादिक भयंकर रोगों की उत्पत्ति हो जाती है अतएव जिस विधि का गुरुदेव निर्देश करें उसी विधि से शनैः शनैः यह प्राण जंगली हाथी की तरह वश में हो जाता है। शास्त्रों में प्राणजय की सिद्धि का यही उपाय बताया गया है कि–

यथा सिंहो गजो व्याघ्रो
भवेद्वश्यः शनैः शनैः।
तथैव सेवितो वायुरन्यथा
हान्ति साधकम् ।।
युक्तं युक्तं त्यजेद्वायं
युक्तं युक्तं च पूरयेत ।
युक्तं युक्तं च बध्नीया
देवं सिद्धिमाप्नुयात् ।।

अर्थात् जैसे शेर, हाथी और व्याघ्रादि शक्तिशाली जंगली जानवर बिना उपाय के वश में नहीं आते और तनिक भी असावधानी होने पर घातक सिद्ध होते हैं किन्तु युक्ति पूर्वक शनैः शनैः वश में होते हैं वैसे ही प्राण को वश में करना चाहिये अन्यथा कुपित हुआ प्राण साधक को विनष्ट कर देता है। अतएव पूर्ण गुरु से युक्ति जानकर उसी के अनुसार युक्ति पूर्वक ही प्राण का पूरक, रेचक और कुम्भक करना चाहिये। इस प्रकार ही प्राण जय की सिद्धी प्राप्त होती है।

भगवान शिवजी ने भी वामदेव को उपदेश देते हुये यही सिद्धान्त पुष्ट किया है कि गुरु कृपा के बिना प्राण जय नहीं होता। अतएव हठयोग के साधक को चाहिए कि

मरुज्जयो यस्य सिद्धस्तं
सेवेत गुरु सदा ।
गुरुवक्त्रप्रसादेन कुर्यात्
प्राणज्यं बुधः ।।

अर्थात् साधक को ऐसे गुरु की सदैव निरन्तर सेवा करते रहना चाहिए जिसको प्राणजय सिद्ध हो गया है क्यों कि गुरुमुख से प्राप्त निर्देश के अनुसार चलने पर ही प्राण जय होता है। भगवान कपिल देव ने अपने सांख्य सूत्र में कहा है कि–

"प्रणतिब्रह्मचर्योपसर्पणानि।
कृत्वा सिद्धिर्बहुकालात्ताद्वत्।।"

(योग बीज)

अर्थात् जैसे इन्द्र को ब्रह्मचर्यादिक व्रतों का पालन करते हुये नम्र भाव से अपने गुरु ब्रह्मा जी की शरण में जाने पर ही चिरकाल में सिद्धि प्राप्ति हुई वैसे ही साधकों को भी ब्रह्मचर्यादिक यम नियमों का पालन करते हुये विनीत भाव से गुरु की शरण में जाकर चिरकाल तक उनकी सेवारत रहना चाहिए तभी सिद्धि की प्राप्ति होगी अन्यथा नहीं।

बिना गुरुदेव के शास्त्रों का अध्ययन करते रहने से शास्त्रों के रहस्यों का ज्ञान नहीं हो पाता अपितु अनेक शंकाओं में बुद्धि उलझकर ही रह जाती है। यदि कोई पुरुष निरन्तर लगन से परिश्रम कर किसी विद्या को जान भी ले किन्तु वह भी फलसिद्धि कराने में असमर्थ है ऐसा स्वयं भगवान सदाशिव जी ने प्रतिपादित किया है कि-

भवेद्वीर्यवती विद्या गुरुवक्त्र समुद्भवा।
अन्यथा फलहीना स्यान्निर्वीर्याप्यति दुखदा।।

(शिव संहिता)

अर्थात् गुरुमुख से प्राप्त विद्या ही वीर्यवती होती है अर्थात् फलदायिनी होती है। बिना गुरु मुख के स्वयं प्राप्त की गयी विद्या फल देने में समर्थ नहीं होती अपितु वह निर्वीर्या और दुखदायी ही सिद्ध होती है।

श्रुतियों में भी इसकी पुष्टि की गई है कि-

आचार्याद्धेव विद्या विदिता "साधिष्ठं प्रापयति"

(छांदोग्य उपनिषद्)

अर्थात् गुरु मुख से प्राप्त हुई विद्या ही यथेष्ट फल देती है।

अब प्रश्न उठता है कि वह यथेष्ट फल क्या है जिसकी प्राप्ति गुरु कृपा के बिना संभव नहीं है। यह यथेष्ट फल योग की सिद्धि है जिसकी महिमा हमने अपने पिछले लेख में वर्णित की है। योग की सिद्धि का संबंध मन के निरोध से है और यह मन प्राण के साथ मिलकर उसी प्रकार एक हो गया है जिस प्रकार पानी में मिलकर दूध। इसीलिए अमनस्क खण्ड में भगवान महादेव जी ने प्रतिपादन किया है कि-

प्राणो यत्र विलीयते मनस्तत्र विलीयते।
मनो विलीयते यत्र प्राणस्तत्र विलीयते।।

अर्थात् जहाँ प्राणलय हो जाता है वहीं मन लय हो जाता है। अतएव प्राणजय होने पर मनजय हो जाता है और मन का निरोध हो जाने पर प्राणजय हो जाता है। प्राणजय में गुरु की

अपेक्षा का सूक्ष्म वर्णन हम ऊपर कर आये हैं। अब मनोजय में गुरु की अपेक्षा का वर्णन करेंगे। भगवान महादेव जी ने अपने मुखारविन्द से इसका इस प्रकार से निरूपण किया है कि–

तत्राप्यसाध्य पवनस्य नाशः

षडङ्ग योगस्य निषेवणेन ।।

मनोविनाशस्तु गुरुप्रसादा

निमेषमात्रेण सुसाध्य एव।।

अर्थात् प्राण पर विजय प्राप्त करना तो बहुत कठिन होता है किन्तु गुरु मुख से प्राप्त निर्देश के अनुसार षट चक्रों का ध्यानयोग से भेदन करते हुए गुरुकृपा से मनोजय तो अल्पकाल में ही सुसाध्य है।

अब यहाँ एक बात विचारणीय है कि जब दुर्लभ योगविद्या गुरु कृपा से अल्पकाल में ही प्राप्त हो सकती है तो वह गुरु कृपा कैसे प्राप्त हो। इस विषय में श्रुतियों ने उपदेश किया है कि–

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ

तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।।

अर्थात् जिस शुद्ध अन्तः करण वाले श्रद्धालु साधक की जगदात्मा में परा अव्यभिचारिणी अनन्यभक्ति है और वैसी ही शुद्ध परमतत्वस्वरूप अपने गुरु में है उसी को श्रुतियों के रहस्यों का प्रकाश होता है। अतएव गुरु चरणों में जिस साधक की पूर्ण शरणागति होती है वही गुरुकृपा का पात्र होता है। पुण्यशाली गुरु–भक्त को ही गुरु कृपा प्राप्त होती है, मनुस्मृति में गुरु कृपा प्राप्त करने हेतु निर्देश दिया है कि –

यथा खनन्खनित्रेण नरो वार्यधिगच्छति।

तथा गुरुगतां विद्यां शुश्रुषुरधिगच्छति।।

(मनुस्मृति)

अर्थात् जैसे खोदते–खोदते अधिक गहराई में जाने पर ही मनुष्य को शुद्ध जल की प्राप्ति होती है वैसे ही निरन्तर गुरु–सेवा में रत रहने वाले शिष्य को ही गुरुकृपा से योगविद्या की प्राप्ति होती है। जगदात्मा भगवान श्री कृष्ण जी ने भी गीता में संकेत किया कि –

जन्मनां सहस्त्राणांमन्ते ज्ञानवान मांप्रपद्यते।

अर्थात् सहस्त्रों जन्मों की साधना के बाद जीव योगसिद्धि से मुझे प्राप्त करता है। पुनः वह योग–सिद्धि कैसे मिलती है इसका जगदात्मा भगवान श्री कृष्ण जी यही उपाय बताते हैं कि–

"तद विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।

उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनः तत्वदर्शिनः।।

अर्थात् उस योगविद्या को विनीत भाव से गुरु चरणों में अपने को अर्पण करके उनकी

सेवा करके तथा जिज्ञासाभाव से उनसे पूछ करके जानो तभी वह तत्ववेत्ता गुरु योगविद्या का उपदेश करेंगे। यहाँ यह शंका नहीं करनी चाहिये कि ज्ञान योग से भिन्न है। वस्तुतः ज्ञान योगसिद्धि का फल है। इसी लिए जगदात्मा भगवान श्रीकृष्ण जी ने स्वयं अपने मुखारविन्द से स्पष्ट कर दिया है कि–

एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति।

अर्थात् ज्ञान और योग एक ही है जो यह समझता है वही यथार्थ समझता है।

यदि कोई यह शंका करे कि शास्त्रों में तो यह भी कहा गया है कि अपनी आत्मा ही अपना गुरु है, क्यों कि भागवत के एकादश स्कन्ध में लिखा है कि–

समुद्धरत्ति ह्यात्मानमात्मनैवाशुभाशयात्।
आत्मनो गुरुरात्मैव पुरुषस्य विशेषतः॥

अर्थात् यह पुरुष विशेष करके आप ही अपना गुरु होता है क्योंकि स्वयं ही विचार करके अशुभ संसार से अपना उद्धार करता है।

महर्षि वसिष्ठ जी ने भी योगवासिष्ठ में भगवान राम को उपदेश करते हुये कहा है कि–

उपदेशक्रमो राम व्यपस्थामात्रपालनम्।
ज्ञप्तेस्तु कारणं शुद्धा शिष्यप्रज्ञैव राघव॥

अर्थात् हे राम गुरु का शिष्य को उपदेश करना तो मर्यादापालन मात्र है। वस्तुतः ज्ञान की प्राप्ति का कारण तो शिष्य की विशुद्ध प्रज्ञा ही है।

पुराणों में भी बिना गुरु के ही गर्भ में ही वामदेव को ज्ञानप्राप्ति का उल्लेख मिलता है। इसी प्रकार जडभरत को भी बिना गुरु के ज्ञान की प्राप्ति हुई है। इस प्रकार की शंकाओं का समाधान अखिल लोक पावन भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में किया है कि–

पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपिरः।
तत्र तं बुद्धिसंयोग लभत पौर्वदेहिकम्॥

अर्थात् पूर्व जन्मकृत योगाभ्यास के फल स्वरूप माया का विक्षेप स्वयं हट जाता है और साधक को पूर्वजन्म में गुरुकृपा से प्राप्त बुद्धि योग की इस जन्म में प्राप्ति हो जाती है। आत्मपुराण में भी यह बात स्पष्ट कर दी गयी है कि वामदेव जी को पूर्वजन्म में सनकादिकों के गुरु उपदेश के फलस्वरूप ही गर्भ में ज्ञान की प्राप्ति हुई। भगवान पतंजलि देव ने भी

"भवप्रत्ययः विदेह प्रकृतिलयानाम्"

अर्थात् पूर्वजन्म में प्राप्त विदेहता तथा प्रकृतिजयत्व के कारण पुरुषों को जन्म लेने मात्र से योगसिद्धि की प्राप्ति का निरूपणकर यह बात स्पष्ट कर दी है। भागवत में अपनी आत्मा ही अपना गुरु है अथवा वसिष्ट जी ने जो शिष्य की विशुद्ध प्रज्ञा को ज्ञानसिद्धि का हेतु बताया है उसका भी यही अभिप्राय है कि साधक को केवल गुरु के आश्रय ही नहीं रहना चाहिये अपितु गुरु

द्वारा उपदेशित साधनाओं का अभ्यास करके अपने अन्तः करण की शुद्धी करनी चाहिये, क्योंकि शुद्ध अन्तः करण में ही योग विद्या का प्रकाश होता है और अन्तः करण की शुद्धि उपासनाओं से होती है और उपासनाओं का बिना गुरु मुख से जाने यथार्थ ज्ञान नहीं होता है। अतः गुरु को अपेक्षा की विरोध नहीं है।

जैसे किसी बर्तन में चाहे जितना जल भरें यदि उसमें छिद्र है तो कदापि जल नहीं ठहरेगा। इसी प्रकार गुरुकृपा से प्राप्त योग विद्या उसी शिष्य के पास ठहरती है जिसके अन्तः करण में अहंकार, काम, क्रोधादिक विकाररूप छिद्र नहीं है। अतः साधक को निरन्तर ब्रह्मचर्यादिक यम नियमों का पालन करते हुये निरन्तर गुरु द्वारा उपदेशित योगाभ्यास में रत रहना परमावश्यक है अन्यथा गुरु प्रदत्त योग विद्या अशुद्ध अन्तःकरण से निकलकर पुनः गुरु के पास वापिस चली जायगी। इसी लिए जगदात्मा भगवान श्री कृष्ण जी ने गीता में उपदेश दिया है कि–

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वाप्नावबोधस्य योगी भवति दुःखहाः।।

अर्थात् जिसका आहार एवं व्यवहार नियमित तथा युक्त है और जिसकी कर्म प्रवृति भी युक्त है, जो नियमित एवं संयमित, ढंग से सोता और जागता है उसी को दुःख नाशक योगसिद्ध सिद्ध होता है।

गोरक्षशतक में योग मार्ग के साधकों के लिये योगसिद्धि में बाधक वस्तुओं का त्याग करने का उपदेश दिया है कि–

वर्जयेच्छर्जनप्रान्तं वह्निस्त्रीपथसेवनम्।
प्रातः स्नानोपवासादि कायक्लेशविधिं तथा।।

अर्थात् योग के साधकों को दुर्जनों की संगति, अग्नितापन स्त्रीगमन, अधिक भ्रमण और शरीर को क्लेश देने वाली प्रातः स्नान और उपवास आदि क्रियाओं का त्याग कर देना चाहिए।

क्षमविन्दु उपनिषद् में भी योग जिज्ञासु बाधक के लिए कुछ वर्जित कर्मों का उल्लेख किया है कि–

भयं क्रोधमयालस्यमतिस्वप्नातिजागरम्।
अत्याहारमनाहारं नित्यं योगी विवर्जयेत्।।

अर्थात्–योगी को भय, क्रोध, आलस्य अतिनिन्दा–अति जागरण, अधिक भोजन और निराहार का सर्वथा नित्य वर्जन करना चाहिए।

किसी भाग्य शाली जीव को परम कृपालु गुरु की कृपा से कुछ अनुभूतियों का प्रकाश होने भी लग जाय उसको भी शास्त्र चेतावनी देते हैं कि–

अत्याहारः प्रयासश्च प्रजल्पो नियमग्रहः।
जनसंसर्गश्च लौल्यं च षड्भिर्योगो विनश्यति ।।

अर्थात् अधिक भोजन करने से, अधिक परिश्रम से वार्तालाप से व्रत इत्यादि के कठिन नियमों के पालन से, सांसारिक जीवों के सम्पर्क से इन्द्रियों के भोगों में लोलुपता से योगविद्या का प्रकाश विनष्ट हो जाता है।

इस लिए जिन भाग्यवान साधकों को परम दयालु करुणानिधि कृपामय श्री महाप्रभुजी की कृपा से योग की अनुभूतियाँ हो रही हैं। वे अपने श्री गुरुदेव के द्वारा दी गई सम्पदा को व्यर्थ न खोदेवें अपितु उपर्युक्त बातों को समझ कर उनका अवश्य ही पालन करें अन्यथा सद्गुरु की दुर्लभ कृपा पाकर भी योगसिद्धि न पास सके तो पश्चात्ताप के अतिरिक्त कुछ हाथ न लगेगा केवल विनाशकारी अहंकार का भूत सिर पर सवार हो जायेगा।

●●●

शोक संवेदना

(1) ऋषिकेश निवासी ला. रामेश्वर दयाल का 23 दिसम्बर 2014 को देहान्त हो गया है वे गुरुदेव के पुराने व लाड़ले बच्चों में से एक थे। सिद्धयोग परिवार उनके बिछुड़ने पर हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

(2) मण्डी (हि.प्र.) निवासी बृजमोहन सेठी का 7 जनवरी 2015 को देहान्त हो गया। गुरुदेव के पुराने बच्चे थे। उनकी आयु 76–77 वर्ष की थी। सिद्धयोग परिवार उनके दिवंगत होने पर अपनी हार्दिक संवेदना प्रेषित करता है।

– सम्पादक सिद्धयोग

योग-आसन

हस्तपादांगुष्ठासन

विधि– इस आसन के करने के लिये भी पहले समकाय शिरोग्राव की विधि अनुसार बिल्कुल सीधा समसूत्रता के ढंग से खड़ा हो जाना चाहिये, उसके बाद अपने एक पैर को जमीन पर बिल्कुल सीधा खड़ा रहने दें व उसके विपरीत पैर को उसी ओर के हाथ से पकड़ कर जंघा की सीध में बिल्कुल सीधा तनाव के साथ सहारे कर सामने की ओर सीधा करके पकड़े रखें और उसके विपरीत ओर के हाथ को अर्ध चन्द्राकार से कटि देश में जमा कर रखें उसको हस्तपादांगुष्ठासन कहते है। इस आसन के करने की आम प्रचारित विधि उपरोक्त ही है किन्तु यदि इस आसन को उपरोक्त विधि से न करके थोड़ा अन्तर देकर किया जाय तो भी उत्तमोत्तम बनता है और परिणाम में दोनों तरीकों से करने पर फल समान ही है।

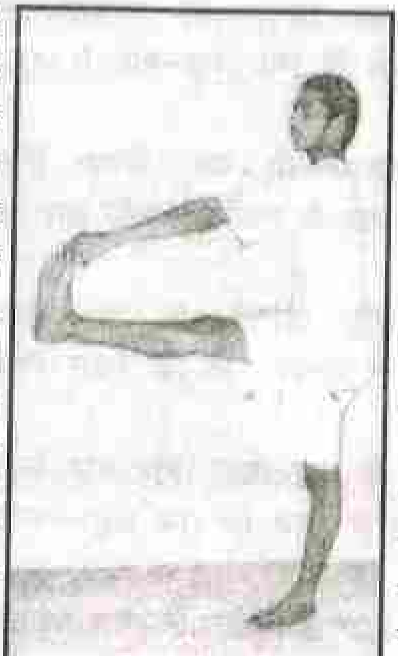

हस्तपादांगुष्ठासन

दूसरी विधि– समसूत्रता से बिल्कुल सीधे खड़े हो जायें व अपने बायें पैर को दाहिने पैर जंघा तक मोड़कर ले जाकर दाहिने हाथ से उस मुड़े हुए बायें पैर का अँगूठा पकड़कर जंघा की सीध में तनाव के साथ बिल्कुल से कर दें व अपने बायें हाथ को कटि प्रदेश में अर्ध चन्द्राकार जमाकर रखें। इसी प्रकार दाहिने पैर को बाँयी जंघा की ओर झुकाकर बायें हाथ से पकड़ कर सामने की ओर तनाव के साथ सीधा कर दें। दोनों पैरों के तनाव में किसी भी प्रकार का कोई अन्तर न आने पाये। इसी का नाम **हस्तपादांगुष्ठासन** है। इन दोनों विधियों में पहले वाली विधि के अभ्यासी के सामने की ओर सीधे (अँगूठा पकड़ कर सीधे किये हुए) किये हुए पैर के जानू पर अपने शिर या नाक को लगाने का भी प्रयत्न कर सकते है किन्तु यह प्रयत्न सुसाध्य नहीं है। अनवरत अभ्यास करने पर थोड़े समय बाद अवश्य अभ्यस्त हो जायेंगे।

करने का समय– अपने शरीर की स्थिति के अनुसार आधे मिनट से लेकर 2 या 3 मिनट तक अभ्यास बढ़ाया जा सकता है।

<u>फल–</u> यह आसन अपना पहिला प्रभाव मलमूत्र विसर्जन नाड़ियों पर डालता है व उसके साथ छोटी और बड़ी आँतों पर इसका प्रभाव पड़ता है। अतः कोष्ठबद्धता को दूर करता है। बहुमूत्रादि रोगों में लाभदायक है। मन्दाग्नि को दूर करता है। मेरुदण्ड में दृढ़ता देता है। शरीर के पृष्ठ भाग में होने वाले वात रोगों में लाभदायक है।

●●●

'सब प्रकार से परमात्मा के ही शरण'

लज्जा, भय, मान, बड़ाई और आसक्ति को त्याग कर एवं शरीर और संसार में अहंता, ममता से रहित होकर केवल एक परमात्मा को ही परम आश्रय, परमगति और सर्वस्व समझना तथा अनन्य भाव से अतिशय श्रद्धा, भक्ति और प्रेमपूर्वक निरन्तर भगवान् के नाम, गुण, प्रभाव और स्वरूप का चिन्तन करते रहना एवं भगवान् का भजन, स्मरण रखते हुए ही उनके आज्ञानुसार कर्तव्यकर्मों का निःस्वार्थ भाव से केवल परमेश्वर के लिए आचरण करना यह 'सब प्रकार से परमात्मा के ही शरण' होना है।

गुरु बन्दना

प्रेषक – रुद्रदत्त चतुर्वेदी, गोरखपुर

<u>दोहा</u>

दीन–दयालु सतगुरु, समरथ बन्दीछोड़।
युगल चरण में बन्दना, भाव सहित कर जोड़ि।।

माथे पर श्रीचरण की, सुन्दर रज धारौं।
जाके पुण्य से ताप–त्रय, क्षण ही में टारौं।।

मंगलकरनी पावनी, रज श्री चरणन की।
बड़े भाग्य उस जीव के, जिस के माथ चढ़ी।।

नेत्र उघाड़े हीय के, निर्मल दृष्टि करै।
दोष निवारै नयन के, जो नयनन में लगै।।

अन्तर्मन के रोग सब, नासे क्षण ही माहिं।
चूरन चरणन–धूलि का, जो श्रद्धा से खाहिं।।

तीरथ सतगुरु चरण में, जो कोई न्हावै आय।
आधि व्याधि उपाधि सब, चित्त अपने की गँवाय।।

सतगुरु चरणन सा नहीं, तीरथ जग में और
धोवै मन की मैल जो, काटै चित की खौर।।

क्षण में मन निर्मल भया, चरणन के परताप।
माया ममता मिटि गयी, सूझा अपना आप।।

तीन लोक में प्रकट है, महिमा अगम अकथ।
मनसा पूरणहार है, गुरु पूरा समरथ।।

काम क्रोध की लहर है, प्रबल मोह की धार।
और कोई आधार ना, नाव पड़ी मंझधार।।

आशा तृष्णा भंवर में, डोले बिन आधार।
गुरु बिन जीवन नाव को, कौन लगावे पार।।

बुद्धि और चतुराई से, पार न पाइ सकै।
क्षण इक में भव पार है, जो गुरु शरण गहै।।

बहुल जनम से जीव यह, ममता मोह आधीन।
सब ही बन्धन काटि करि, निर्भय सतगुरु कीन।।

जो न छुड़ाये सतगुरु, तो फिर कौन छुड़ाय।
दुविधा की जंजीर यह, और से काटी न जाय।।

चरणन की आराधना, सेवा सुमिरण ध्यान।
यह सेवक का धर्म है, याही में कल्याण।।

सुमिरे सतगुरु को सदा, सो सेवक सुख पाय।
चरण कमल गुरुदेव के, नित हिरदे में ध्याय।।

आपाभाव बिसारि करि, गुरु से नेह लगाय।
कबहूँ न बिसरे सतगुरु, और सकल बिसराय।।

औरहुँ त्यागी आस सब, गुरु चरणन की आस।
सफल जनम जग ताहि का, भाखै दासनदास।।

(आनन्द संदेश से साभार)

लल्ला आने वाला समय योग का है......

– अवनीश भटनागर, सहारनपुर

सद्गुरु देव भगवान, योगेश्वर श्री चन्द्रमोहन महाप्रभु जी परम प्रतापी महासिद्ध योगेश्वर थे अपने लीला विहार के समय योग एवं गुरु भक्ति को ही सर्वोपरि रखा। उन्होंने सभी योग ग्रन्थों को। आदर देकर जग में पुनर्स्थापित किया वहीं पतंजली देव की अमर कृति योग दर्शन एवं योगेश्वर श्री कृष्ण जी के श्री मुख द्वारा प्रादुर्भूत परब्रह्म की परा वाणी जो संसार में श्री मद्भगवत गीता के पावन नाम से अवतरित हुई इन दोनों पावन ग्रन्थों को आत्मसात किया और योगदर्शन एवं गीता के ज्ञान को पूर्णसाकार मूर्ती के रूप में योग को अपने श्री मुख द्वारा प्रचारित एवं प्रसारित करने और सुपात्रों को करवाने के लिये अपना जीवन लगा दिया। उनकी दिनचर्या का प्रारम्भ योग एवं गुरु उपासना से ही होता था और योग का पालन करते–करते रात्रि हो जाने पर शयन भी योग निद्रारूप मे ही हो जाया करता था। उनके सम्पूर्ण जीवन में योग के सिद्धान्त कूट–कूट कर भरे थे उनका कोई भी कृत्य वियोग वाला नहीं होता था प्रत्येक कार्य योग के लिये सहयोग का ही होता था।

जीवन में योग को ही महत्व दिया – छोटी आयु से ही आर्य संस्कारों में पालन पोषण होने के बाद भी आप प्रारम्भ से ही योग का पालन करते रहे। श्री अलुपुर धाम में एक कीकर के पेड़ के नीचे ध्यानस्थ रहा करते थे आपकी वह बाल तपस्थली वर्तमान समय में भी सुरक्षित है। आपका और श्री रामलाल महाप्रभु जी का जब प्रथम मिलन हुआ तो उस समय भी आपने उनसे योग ही सिखाने की बात कही जिससे श्री कृष्ण चटपट मिल जायें उसके बाद तो आपमें योग इतना कूट–कूट कर समा गया कि आप योग विद्या की पूर्ण साकार मूर्ती ही बन गये। आपके दर्शन करने मात्र से साधकों को अन्तरंग एवं बाह्य योग की क्रियायें स्वमेव होने लग जाया करती थी। जिससे चहुंओर योग के दाता के रूप में प्रसिद्धि मिली।

श्री गुरू कृपा में योग की ही प्राप्ती – महाप्रभु श्री चन्द्रमोहन जी ने सद्गुरु देव के रूप में परिपूर्ण सद्गुरु योग योगेश्वर श्री रामलाल महाप्रभु जी को प्राप्त किया जो हिमालय के महान सिद्ध सिद्धेश्वर थे और अनेक शरीर एक साथ धारण करके जग में योग का दान दे रहे थे वह योग में हर प्रकार से परिपूर्ण थे। इन्होंने ही श्री चन्द्रमोहन जी को योग दीक्षा देकर सिद्धयोग के सारे गुप्त साधन से गुप्त साधन इनको प्रदान कर दिये। योग में पूर्ण पारगत बना कर केवल बीस वर्ष की छोटी आयु मे ही योग दीक्षा प्रदान करने का पूर्ण अधिकार दे दिया और ऐसी योग शक्ति प्रदान की जिसके मुकाबले के लिये महाप्रभु श्री रामलाल जी के अन्य शिष्यों में कोई भी नहीं थे अन्य लोगों मे तो होने का प्रश्न ही नहीं है।

योग में पूर्ण पारंगतता – महाप्रभु श्री रामलाल जी जैसे हिमालय के परिपूर्ण सिद्धेश्वर को सद्गुरु रूप में प्राप्त कर लेने के बाद इनका योग मय जीवन प्रारम्भ हो गया योग दीक्षा हुई, ब्रह्मवाक्यों का साक्षात्कार हुआ श्री शिव दर्शन, कृष्ण दर्शन, श्री कृष्णोऽहं, तत्व दर्शन, अगड़धत्ता

प्रसंग में कायाव्यूह की रचना आदि-आदि फिर पूर्ण सद्गुरु शक्ति महाप्रभु श्री रामलाल जी से मिली जिससे संसार में जगद्गुरु के रूप में सबको गुरु दीक्षा देने का अधिकार प्राप्त हुआ। इसके पश्चात् सिद्धयोग की अमर सद्गुरु परम्परा की एक सशक्त कड़ी बनकर संस्कारी जीवों को निहाल करते आ रहे हैं।

जगत में योग विद्या का प्रचार – योग योगेश्वर श्री चन्द्रमोहन महाप्रभु जी ने अपने श्री मुख से यह शब्द कहे थे कि लल्ला मैं तो श्री प्रभुजी का सिपाही हूँ हमें सुख व सुविधा की आशा नहीं करनी चाहिये उनकी आज्ञा का पालन हर हाल में करना है। यदि रेल गाड़ी की सीढ़ियों पर डंडा पकड़ कर भी यात्रा करके योग का प्रचार करना पड़े तो हम करेंगे। उन्होंने इससे भी बढ़कर योग के लिये कार्य किया अपने सद्गुरुदेव महाप्रभु श्री रामलाल जी के गाँव से बाहर निर्जन स्थान में बनी गुफा का जीर्णोद्धार करके अपना सारा जीवन उसकी सेवा में लगा दिया और अपने रात दिन के अथक प्रयासों से एक योग प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना की और पावन गुफा का नाम भी श्री सिद्धगुफा रखकर अपने सद्गुरुदेव की पावन स्मृति को विश्व विख्यात बना दिया।

लुप्तयोग को जग में पुनः प्रतिष्ठा दिलाई – महाभारत काल के बाद निरंतर योग का ह्रास होता गया इस अमर विद्या का ज्ञान या तो हिमालय में चला गया या फिर लुप्त हो गया। हमारे दादा सद्गुरुदेव एवं प्यारे सद्गुरुदेव ने लुप्त योग विद्या का पुनरुद्धार करके जग में प्रतिष्ठित किया जो गीता, उपनिषदों, शास्त्रों आदि अन्य ग्रन्थों में था उसके सिद्धान्तों को क्रियाओं को समझाया, कराया, शक्तिपात की लुप्त प्रक्रिया को पुनः करके दिखाया कलियुग में सतयुग का कार्य कर दिया। " **गुरोस्त मौन–व्याखनं शिष्यस्तु छिन्न संशयाः** " के सिद्धान्त के अन्तर्गत जिज्ञासुओं को अपार ज्ञान प्रदान किया स्वयं कुछ भी ना होने का रूपक बनाये रहे और पर्दे के पीछे से सारी डोरियां स्वयं ही चलाते रहे, सारा कार्य स्वयं करते रहे नाम दूसरों का लेते रहे। अनेकों विश्व योग सम्मेलनों की अध्यक्षता करके कुशल संचालन किया योग पर गूढ़ एवं दुर्लभ व्याख्यान दिये, योग के बाह्य एवं अभ्यन्तर दोनों विधाओं को पूर्णतः कराया योग सम्मेलनों में प्रायः योगेश्वर श्री चन्द्रमोहन जी की धूम रहा करती थी। इसलिये विदेशी लोग भी इनसे आकर्षित हुये बिना नहीं रह सके इनसे दीक्षा ली शक्तिपात लिया और अपने देश ले जाने के बहुत प्रयास किये।

लल्ला आने वाला समय योग का है – परिपूर्ण सिद्ध योगेश्वर श्री चन्द्रमोहन जी ने एक समय योग विषय में वार्तालाप करते हुये यह शब्द कहे थे कि हम तो श्री प्रभुजी की योग विद्या रूपी उनके दिये गये हलवे को रात दिन बाँट रहे हैं चाहे कोई हमें समझे या ना समझे पर लल्ला आने वाला समय योग का है। उनकी यह अमर वाणी आज हम देख रहे हैं कि पूरी तरह से फलीभूत हो रही है उनके संकल्प एवं मेहनत से आज योग विद्या विश्व विख्यात हो रही है शक्ले एवं शरीर अलग–अलग हो। सकते हैं परन्तु संकल्प हमारे सद्गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन महाप्रभुजी का ही पूर्ण हो रहा है। एक जमाना हुआ करता था कि गिनती के लोग योग की बात करने वाले थे उनमें से आधे तो अपने श्री रामलाल महाप्रभुजी के शिष्य प्रशिष्य परिवार के ही होते थे चाहे वह कनखल वाले हों। चाहे छेहरटा, अमृतसर वाले या होशियारपुर वाले या नरसिंह मूर्ती जी के शिष्य हो या फिर हमारे

परम प्रतापी गुरुदेव महाप्रभु श्री चन्द्रमोहन जी जो स्वयं श्री रामलाल महाप्रभु जी के ही अन्तरंग एवं प्रमुख दीक्षित, उत्तराधिकारी शिष्य थे। हमारे सद्गुरुदेव जी के सैकड़ों शिष्य प्रशिष्य योग आचार्यो के रूप में देश विदेश में योग के क्षेत्र में भारी कार्य कर रहे हैं। बाकी अन्य संस्थायें भी योग के लिये कार्य कर रहीं हैं। जिसके फलस्वरूप आज सारे विश्व में योग की धूम मची हुई है और योग की योग्यता को दुनिया समझ रही है।

गुरुदेव के संकल्पानुसार योग की घर-घर में पहुँच – अपने सर्वशक्ति मान सद्गुरु देव योगेश्वर श्री रामलाल महाप्रभु की पवित्र दिव्य विद्या योग को घर-घर तक पहुँचाने में गुरुदेव महाप्रभु श्री चन्द्रमोहन जी ने अपना सारा जीवन लगा दिया। उन्होंने इसे अपने जीवन का लक्ष्य बना कर कार्य किया हजारों किलोमीटर की यात्रायें की सिर्फ और सिर्फ योग की ही बात की जिस समय लोग योग के विषय में ना के बराबर जानते थे उस समय उन्होंने जीवों के अन्दर योग की जिज्ञासा भर कर योगी बना दिये लोगों ने जीवन में योग को स्थान देकर अप्रत्याशित लाभ प्राप्त किये इसका सारा श्रेय: योगेश्वर श्री चन्द्रमोहन जी को ही जाता है उनके अथक प्रयासो से ही जग में योग की धूम मच गई और वर्तमान में जो अन्य योगिजन भी योग का कार्य कर रहे हैं वह भी कहीं ना कहीं महाप्रभु श्री चन्द्रमोहन जी या महाप्रभु श्री रामलाल के अन्य शिष्यों प्रशिष्यों से ही प्रभावित होकर योगारूढ़ हुये और वर्तमान में योग का दान दे रहे है। आज के समय बाबा रामदेव जी ने इसमें बहुत अच्छा कार्य किया है। लगता है हमारे श्री गुरुदेव जी का ही संकल्प पूर्ण हो रहा है। अच्छा होता कि योग प्रचार का यह विराट कार्य करने वाला हमारे सिद्धगुफा परिवार का कोई बालक होता तो अपने प्रतापी श्री गुरुदेव के नाम से जुड़कर सब कार्य करता।

प्रधानमन्त्री मोदी द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस का प्रस्ताव – हिमालय के सिद्धों की प्रेरणा से प्रधानमन्त्री बने श्री नरेन्द्र मोदी जी जीवन में नित्य योग करते हैं। जिनकी दिनचर्या योगमयी है। उन्होंने भारत की अमर विद्या योग को अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान दिलाने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ में अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस का प्रस्ताव रखा जो अतिशीघ्र पास होकर लगभग 190 देशों में से 177 देशों ने समर्थन करके तत्काल स्वीकृति प्रदान कर दी। ऐसा पहली बार देखने में आया कि किसी प्रस्ताव के इतने समर्थक हुये शेष देश भी इसके विरोधी नहीं थे। 21 जून को योग दिवस के लिये चुना गया। श्री गुरुदेव जी का अमर वाक्य पुनः याद आया, लल्ला आने वाला समय योग का है।

●●●

श्री मद्भागवत में योग-परिचर्या

लेखक – डॉ. विजय सिंह

मन्ये महाभागवतं नारदं देवदर्शनम्।
येन प्रोक्तः क्रियायोगः परिचर्याविधिर्हरेः ।।3।।

(स्क 4, अ 13)

विदुरजी ने श्री मैत्रेय जी से कहा– महात्मन ! परम भागवत श्री नारद जी जिन्होंने पांचरात्र का निर्माण करके श्री हरि की पूजा पद्धति रूप क्रिया–योग (पठनीय तपः, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधानानि क्रिया योग: पा. सू.) का उपदेश प्रचेताओं को दिया तथा ध्रुव जी का गुणगान किया है उसे हमें विस्तार से सुनाइये। मैत्रेय जी ने कहा – विदुर जी ! महाराज ध्रुव के वन चले जाने पर उनके पुत्र उत्कल ने राजसिंहासन स्वीकार नहीं किया। वे जन्मना महान योगी थे। लोग उनके व्यवहार से उनका आकलन करने में असमर्थ थे। वे शान्तचित्त, आसक्तिशून्य, समदर्शी थे। वे अपनी आत्मा को सम्पूर्ण लोकों में स्थित देखते थे। उनके अन्तःकरण का वासनारूप मल अखण्ड योगाग्नि से भस्म हो गया था। वे सर्वत्र अपने आत्मा से अभिन्न पाते तथा आनन्दमय प्रशान्त ब्रह्म बोध में निमग्न रहते थे –

अव्यवच्छिन्नयोगाग्नि दग्ध कर्ममलाशयः।
स्वरुपमवरुन्धानो नात्मनोऽन्यं ददृक्षत ।।9।।

(स्क 4 अ 13)

अतः मन्त्रियों ने उन्हे पागल, मूर्ख समझकर उनके छोटे भाई वत्सर को राजा बनाया। वत्सर की वंशावली में अंग, वेन आदि की कथा कही गयी है। वेन बाल्यापन से क्रूर कर्मा था। महाराजा अंग वेन की दुष्टता से तंग आकर आधी रात में ऐश्वर्य युक्त राज को त्याग वन में चले गये। मंत्री आदि राजा की खोज में लगे ठीक वैसे ही जैसे योग का यथार्थ रहस्य न जानने वाले अपने हृदयस्थ भगवान को बाहर खोजते रहते हैं –

विज्ञाय निर्विद्य गतं पतिं प्रजाः
पुरोहितामात्यसुहृद्गणादयः।
विचिक्युरुर्व्यामतिशोककातरा
यथा निगूढं पुरुषं कुयोगिनः ।। 48।।

(स्क 4 अ 13)

चौदहवें अध्याय में राजा वेन की कथा कही गयी है। उसने ऐश्वर्य मद में अन्धा होकर यज्ञ, दान, हवन क्रियाओं पर प्रतिबन्ध लगा दिया। पहले ऋषि मुनियों ने उसे समझाकर

सत–पथ पर लाना चाहा परन्तु उसने उन्हें ही गालियाँ दी तथा भगवान की निन्दा करने लगा। तब ऋषियों ने हुंकार मात्र से वेन को मार दिया। राजा की मृत्यु पश्चात पृथ्वी पर अराजकता फैल गयी। तब ऋषियों ने मृत राजा वेनु के भुजाओ का मन्थन किया। उससे एक स्त्री–पुरुष का जोड़ा पैदा हुआ। यही विष्णु अंश से महाराज पृथु तथा नित्य सहचरी लक्ष्मी अंश से अर्चि प्रकट हुई। त्रिकालज्ञ मुनियों ने श्रेष्ठ स्तुति किया है। अध्याय पन्द्रह एवं सोलह में महाराज के यश गान सम्बंधी बातें कही गयी है। सत्रहवें अध्याय में पृथ्वी को शासित कर अन्न औषधियों के दोहन के साथ प्रजा मंगल के कार्य महाराज पृथु ने किया है उसका सविस्तार वर्णन हुआ है। पृथ्वी को धमकाते हुये महाराज ने कहा– पृथ्वी तू बड़ी गर्वीली और मद से युक्त है। माया से गौ का रूप धर कर मेरे सामने खड़ी है। मैं बाणों से तेरे टुकड़े–टुकड़े करके अपने योगबल से प्रजा को धारण करूंगा।

त्वां स्तब्धां दुर्मदां नीत्वा मायागां तिलशः शरैः।
आत्मयोगबलेनेमा धारयिष्याम्यहं प्रजाः ॥27॥

कालरूप महाराज से डरी पृथ्वी काँपने लगी और हाथ जोड़कर वे उपाय बतलाये जिसके करने पर उनकी प्रजा अन्न, धन, औषधि से परिपूर्ण होगे।

अठ्ठारहवें अध्याय में पृथ्वी द्वारा बताये उपाय से उसे समतल करना जिससे वर्षा ऋतु बीत जाने पर भी जल का अभाव न हो, कृषि–योग्य नमी बना रहे, आदि उपाय बताये गये हैं। उन्नीसवें अध्याय में महाराज पृथु द्वारा सौ अश्वमेध यज्ञ करने का उपाख्यान आया है जिसमें बड़े–बड़े योगी, तपस्वी, मुनी देवता सम्मिलित हुये थे –

कपिलो नारदो दत्तो योगेशाः सनकादयः।
तमन्वीयुर्भागवता ये च तत्सेवनोत्सुकाः ॥6॥

(स्कं. 4, अ. 19)

यज्ञ में विघ्न डालने हेतु इन्द्र ने यज्ञ का घोड़ा हर लिया। परन्तु अत्रिऋषि के विज्ञता से पृथु पुत्र ने उस घोड़े को इन्द्र से छीन कर यज्ञ शाला में लौटा लाया। महर्षियों ने इस पराक्रम के कारण उनका नाम विजिताश्व रक्खा। बीसवें अध्याय में स्वयं भगवान श्री विष्णु के प्राकट्य की कथा कही गयी है। भगवान ने महापराक्रमी राजा पृथु को तत्व–ज्ञान का उपदेश देते हुये बोले–राजन ! जो शरीर में आसक्त नहीं है उसे घर, पुत्र और धन आदि में भी ममता नहीं रखना चाहिये।

आत्मा एक है, शुद्ध, स्वयं प्रकाश, निर्गुण होते हुये गुणों का आश्रय स्थान, सर्वव्यापक आवरण शून्य, सबका साक्षी शरीर से भिन्न है। जो पुरुष इस देहस्थित आत्मा को शरीर से भिन्न जानता है, वह प्रकृति से सम्बन्ध रखते हुये भी उसके गुणों से लिप्त नहीं होता क्योंकि उसकी स्थिति मुक्त परमात्मा में होती है –

य एवं सन्तमात्मानमात्मस्थं वेद पूरुषः।
नाज्यते प्रकृतिस्थोऽपि सद्गुणैः समयि स्थितः।।

भगवान ने पुनः कहा– तुम्हारे स्वभाव ने मुझे प्रसन्न किया है अतः तुम्हें जो इच्छा हो, मुझ से वर माँग लो। तप, योग के द्वारा मुझको पाना सरल नहीं है। मैं तो उन्हीं के हृदय में रहता हूँ जिनके चित्त में समता रहती है (समत्व योग उच्यते)– **" नाहं मखैर्वै सुलभस्तपोभियोगेन वा यत्समचित्तवर्ती "।**

भगवान के उपदेश से मोह रहित हो महाराज पृथु ने भगवान की भाँति–भाँति प्रकार से स्तुति किया और दिव्य द्रव्यों से पूजन करके उनके तिरोधान होने पर अपनी राजधानी लौट आये।

इक्कीसवें अध्याय में महाराज पृथु द्वारा अपने प्रजा को सद उपदेश करने की कथा कही गयी है। उन्होंने अपनी प्रजा को कहा– जो राजा प्रजा को धर्म मार्ग की शिक्षा न देकर केवल उससे कर वसूल करने में लगा रहता है। ऐसा राजा प्रजा के पाप का ही भागी होता है और अपने ऐश्वर्य को खो देता है। सारी प्रजा राजा से धर्म के मर्म को सुना और आचरण युक्त होने का दृढ़ निश्चय भी किया और उन्हें बहुत साधुवाद ज्ञापित किया।

बाइसवें अध्याय में सनकादि ऋषियों द्वारा महाराज पृथु को उपदेश किया गया है। यह विवरण भी पूर्ण योग मय है। सार संक्षेप में यहाँ उपदेश उदधृत किया जा रहा है।

एक दिन राजा तथा उनके अनुचरों ने देखा कि सिद्धेश्वर सनकादि अपनी कांति से सम्पूर्ण लोकों को पापमुक्त करते हुए आकाश से उतर कर आ रहे हैं –

तांस्तु सिद्धेश्वरान् राजा व्योम्नोऽवतरतोऽर्चिषा।
लोकानपापान् कुर्वत्या सानुगोऽचष्ट लक्षितान्।।2।।

महाराजा ने स्वर्ण सिंघासन पर मुनियों को विराजमान कराकर पाद अर्घ प्रदान कर, चरणोदक को शिर पर धारण कर बड़ी श्रद्धा एवं संयम के साथ प्रेमपूर्वक बोले– मंगलमूर्ति मुनिश्वरों ! आपके दर्शन तो योगियों को भी दुर्लभ हैं मेरा अहोभाग्य कि स्वतः मुझे आपका दर्शन लाभ हो रहा है –

अहो आचरितं किं मे मंगलं मंगलायनाः।
यस्य वो दर्शनं ह्यासीद्दुर्दर्शानां च योगिभिः।।7।।

(स्कं. 4, अ. 22)

महाराज पृथु ने महामुनियों को भाँति–भाँति से समादृत करके जीवों के कल्याणार्थ उनसे पूछा – प्रभो ! आप सभी संसारानल से दग्ध हो रहे जीवों के परम सुहृद हैं। अतः मैं यह पूछना चाहता हूँ कि संसार से मनुष्य का किस प्रकार सुगमता से कल्याण हो सकता है ? ये अजन्मा भगवान नारायण अपने भक्तों पर कृपा करने हेतु आप सदृश सिद्धपुरुषों के रूप में

पृथ्वी पर विचरण करते रहते हैं।

" स्वानामनुग्रहायेमां सिद्धरुपी चरन्त्यतः"।

महाराज पृथु के आत्म तत्व परक प्रश्न सुनकर सनकादि मुनियों ने राजा की प्रशंसा करते हुये उपदेश दिये, जिसका सारांश यहाँ उल्लिखित है। सनकादि ने कहा – राजन ! देहादि के प्रति वैराग्य तथा अपने आत्मस्वरूप निर्गुण ब्रह्म में सुदृढ़ अनुराग ही कल्याण का एक मात्र साधन निश्चित किया गया है। गुरु और शास्त्र वचनों में विश्वास से, भागवत धर्मों के आचरण से, तत्व जिज्ञासा से, ज्ञानयोग की निष्ठा से, योगेश्वर की उपासना से, भोगासक्त लोगों से दूर रहने से, एकान्त सेवन में स्वाभाविक प्रेम से, यम–नियमों का पालन करते से, योगाभ्यास से मनुष्य जड़प्रपंच (प्रकृति) से विरक्त हो जाता है तब उसे निर्गुण ब्रह्म में अनायास ही प्रीति हो जाती है। ऐसा ही व्यक्ति सद्गुरु शरणागत होता है। उसे सद्गुरु से ज्ञान और वैराग्य मिलता है जिससे वासना शून्य अविद्या आदि पंच क्लेश, अहंकारात्मक उसका लिंग शरीर नष्ट हो जाता है। लिंग शरीर के नाश हो जाने पर सभी गुणों से मुक्त गुणातीत अवस्था में स्थित होता है। यही मोक्ष है।

देखो, जो विषय चिन्तन में लगे रहते हैं उनकी इन्द्रियाँ व मन विषयों में फँस जाती है। विषयी मन बुद्धि की विचार शक्ति को हर लेता है। जिससे स्मृति नाश होता है तथा ज्ञान नहीं रहता। ज्ञान का नाश 'अपने आप अपना नाश करना' कहा जाता है।

उपरोक्त आत्मतत्व का उपदेश पाकर महाराज पृथु ने उन महात्माओं की बहुत प्रशंसा एवं पूजन किया। वे सनकादि ऋषि राजा को आशीर्वचन देने के पश्चात् पुनः आकाश मार्ग द्वारा गन्तव्य को चले गये।

सिद्धयोग मासिका (पत्रिका) का विवरण
फार्म नं. 4

1. प्रकाशन का स्थान – श्री सिद्धगुफा,
संवाई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)

2. प्रकाशन का अवधि क्रम – मासिक

3. मुद्रक का नाम – दासलाल शर्मा
राष्ट्रीयता – भारतीय
पता – श्री सिद्धगुफा संवाई, आगरा (उ.प्र.)

4. प्रकाशक का नाम – दासलाल शर्मा
राष्ट्रीयता – भारतीय
पता – श्री सिद्धगुफा संवाई, आगरा (उ.प्र.)

5. सम्पादक का नाम – दासलाल शर्मा

6. स्वत्वाधिकारी – दासलाल शर्मा

मैं दासलाल शर्मा एतद् द्वारा यह घोषित करता हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य है।

30 जनवरी, 2015

दासलाल शर्मा
कृते, सिद्धगुफा प्रकाशन, सवांई (एत्मादपुर), आगरा

योग-दर्शन में 'ईश्वर-प्रणिधान'

– श्री कृष्णानन्द गुप्त, कछवा, मिर्जापुर

महर्षि पतञ्जलि देव ने 'योगदर्शन' में क्रियायोग के तीन रूप बतलाये हैं। यथा – **'तपस्स्वाध्यायेश्वर प्रणि–धानानि क्रिया योग:'** अर्थात्– तप, स्वाध्याय व ईश्वर – प्रणिधान क्रियायोग है। प्रस्तुत लेख में हम इसके एक मात्र अंग ' ईश्वर – प्रणिधान ' पर यथामति विचार करने का प्रयास करेंगे।

हमारे पूर्वाचार्यो ने समाधि – सिद्धि के लिए जहाँ अनेकानेक साधनों का निर्देश किया है, वहाँ भगवान पतजलि देव ने एक परम सरल साधना ' ईश्वर प्रणिधानाद्वा ' की आज्ञा प्रदान की है। 'ईश्वर – प्रणिधान' की आज्ञा प्रदान की है।' ईश्वर – प्रणिधान ' का स्पष्टीकरण बहुत ही सुन्दर रीति से 'योगभाष्य' में किया गया है –

' ईश्वर प्रणिधान तस्मिन परम गुरौ सर्व कर्मार्पणम् । '

(यो. द. 2/32 या. प्र. भा.)

उस परम गुरु परमेश्वर के निमित्त सम्पूर्ण कर्मो को समर्पण कर देना या कर्मफलों का त्याग करना 'ईश्वर–प्रणिधान' है।

जिस परम गुरु परमेश्वर के निमित्त सम्पूर्ण कर्मो के समर्पण की आज्ञा मिली है, उनका स्वरूप क्या है ? क्योंकि संसार में कोई श्रीराम को कोई श्रीकृष्ण को कोई श्रीब्रह्मा को कोई श्रीविष्णु इत्यादि को ईश्वर बताते हैं अत: ईश्वर के स्वरूप का निरूपण महर्षि ने योगदर्शन के तीन सूत्रों में किया है –

(1) **' क्लेशकर्म विपाकाशयैरपरामृष्ट: पुरुष विशेष ईश्वर:। '**

(यो. द. 1/24)

अर्थात् – क्लेश, कर्म, विपाक आशयों से रहित पुरुष विशेष ईश्वर है।

(2) **' तत्र निरतिशयं सर्वज्ञ वीजम् । '**

(यो. द. 1/25)

अर्थात् – जिससे अधिक कोई दूसरा नहीं है वह सर्वज्ञ है, उसमें ज्ञान

पराकाष्ठा पहुंच चुका है।

(3) 'पूर्वेषामपि गुरु कालेनानवच्छेदात'

(यो.द.1/25)

समय के दायरे में बद्ध न होने के कारण वह (ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि) प्राचीन गुरुओं का भी गुरू परम गुरु है, पूर्व पुरुषों का बड़ा भी है।

अब हम इन सूत्रों में आये क्लेश, कर्म विपाक का अर्थ समझा कर यह बताने की कोशिश करेंगे कि वह सर्वोच्च सत्ता क्या है जिसे योगदर्शन में ईश्वर की सज्ञा प्रदान की गई है।

योग दर्शन मे अविद्या , अस्मिता, राग द्वेष और मृत्युभय ये पाँच 'क्लेश' बताये गये हैं –

'अविद्याऽस्मिता राग द्वेषाभि–निवेशा: क्लेशा:।'

(यो.द.2/3)

कर्म चार प्रकार का होता है :– शुक्ल, कृष्ण शुक्ल–कृष्ण और अशुक्ल–अकृष्य पाप कर्म तथा हिंसा, व्ययभिचार आदि का समूह कृष्ण कर्म' के अन्तर्गत। तप, स्वाध्याय, ध्यान आदि का समूह शुक्ल–कर्म के अन्तर्गत। पर पीड़ा अनुग्रह (पाप व पुण्य मिले हुये) आदि का समूह' शुक्ल–कृष्ण ' के अन्तर्गत। पाप व पुण्य दोनों से रहित ईश्वर समर्पित–अकृष्ण अशुक्ल–कर्म ' के अन्तर्गत आते हैं।

कर्मा शुक्ला कृष्णं योगि नास्त्रिविध मितरेषाम्।

अविद्या आदि क्लेशों के रहने पर कर्मफल, जन्म, आयु और भोग होता है –

सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगा:।'

(यो.द.2/13)

इन सूत्रों के द्वारा हमें सुस्पष्ट पता चलता है कि महर्षि जिन परमगुरू परमेश्वर के निमित्त सम्पूर्ण कर्मो के समर्पण का आदेश हमें देते हैं, वह ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि न होकर अपितु कोई दूसरी सर्वोच्च सत्ता है, जो क्लेश, कर्म, विपाक आशयों से रहित है। वह नित्य शुद्ध चित्स्वरूप परमात्मा सृष्टि के आरम्भ से अबतक होने वाले गुरुओं का भी गुरु हुआ है व अनादि सिद्ध है। अतएव वह सत्ता क्या है। इस प्रश्न का समाधान करते हुये सरस्वती टीका' में भाष्यकार कहते हैं –

'पूर्वे गुरवो हिरण्य गर्भादय:
कालेनावच्छिद्यन्ते ।।'

अर्थात् – जिनकी सत्ता काल की सीमा के अन्तर्गत है, वह अधिकृत सीमा है। सद्गुरु तत्व उससे भी आगे की वस्तु है। जिसकी कोई अवधि नहीं है जिसका कोई अन्त नहीं है। वह है अनादि और अनन्त। शुद्ध चेतन है। वही सत्ता ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि के अन्दर भी अपना प्रकाश रखती है अत: निर्णयात्मक सिद्धान्त की बात यह है –

यत्रावच्छेदनार्थेन कालो
न उपावर्तते सगुरु:।

अर्थात् जिसका अन्त करने के लिये काल उपस्थित नहीं होता या दूसरे शब्दों में जो सत्ता काल के अधिकार से आगे है जिसका न कोई आदि है और न अन्त है वही सत्ता सद्गुरु तत्व है जिसके विषय में हमारे शास्त्र कहते हैं –

भयादस्य अग्निस्तपति,
भयात्तपति सूर्य:।
भयादिन्द्रश्च वायुश्च,
मृत्युर्धावति पंचम:।।

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं,
नेमा विद्यु तो भान्ति कुतोऽयमग्नि
तमेव भान्त मनु भाति सर्व
तस्य भासं सर्व मिदं विभाति ।।

अर्थात् – वही एक सत्ता इस तरह की है जिसके भय से अग्नि तपती है सूर्य तपता है वायु और इन्द्र दौड़े–दौड़े फिरते हैं और काल हर समय आज्ञा में रहता है। वह स्वय प्रकाश है न वहाँ सूर्य चमकता है न चन्द्रमा चमकता है न बिजली का प्रकाश है । अग्नि का तो कहना ही क्या है। उसी के आलोक से सारा संसार आलोकित हो रहा है। वही सद्गुरु सत्ता परात्पर नित्य एवं नित्य पूज्य है। जिस शरीर को वह तत्व अपना अधिष्ठान स्वीकार करता है वह शरीर उसके तेज से प्रकाशित हो उठता है।

नाम रूप से वन्दना उस शरीर हेतु की जाती है जिसके अन्दर वह तत्व प्रकाशित होता है। ये सभी प्रकरण यह प्रकट करते हैं कि वह अव्यक्त सत्ता जो सभी को प्रकाश देने वाली है सद्गुरु सत्ता ही है और उनके ही निमित्त सम्पूर्ण कर्मो का समर्पण कर देना या कर्म फलों का त्याग कर देना 'ईश्वर प्रणिधान' है। यह कोई मनमाना अर्थ नहीं है, बल्कि 'ईश्वर–प्रणिधान' शब्द से साफ दृष्टि गोचर होता है और उसको योगदर्शन के सब टीकाकारों ने स्वीकार किया है। तत्वतः 'ईश्वर–प्रणिधान' भक्ति मूलक निष्काम कर्म योग है जिसका उपदेश जगदात्मा श्रीकृष्ण ने अपने अनन्य सखा अर्जुन के प्रति गीता में किया है। यथा–

यत्करोषि यदश्नासि,

यज्जुहोषि ददासि यत्।

यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ।।

शुभाशुभ फलै रेवं मोक्ष्यसे कर्म बन्धनैः।

(गी. 9/27–28)

' हे अर्जुन ! तुम भोजन, होम, दान, तप आदि जो कुछ भी करते हो, सब मेरे अर्पण कर दो। इस प्रकार (ईश्वरार्पण बुद्धि से कर्म करने पर) तुम शुभ–अशुभ फल रूप कर्मो के बन्धन से छुटकारा पा जाओगे।' योगवार्तिक कार विज्ञानभिक्षु ने (यो.द. 2/1 और 32) सूत्र के भाष्य की व्याख्या करते हुए ' कर्मार्पण ' और 'फलर्पण' के विषय में कूर्मपुराण के निम्नलिखित वचन की ओर संकेत किया है –

कामतोऽकामतो वापि यत्करोमि शुभाशुभम् ।

तत्सर्वं त्वयि संन्यस्तं त्वत्प्रयुक्तः करोम्यहम् ।।

नाहं कर्ता सर्वभेतद् ब्रह्मैव कुरुते तथा ।

एत द्ब्रह्मार्पणं प्रोक्त मृषिभिस्तत्त्व दर्शिभिः ।।

हे ईश्वर ! इच्छा से या अनिच्छा से जो कुछ भी शुभ या अशुभ कर्म करता हूँ, वह तेरी प्रेरणा से करता हूँ। वह सब तेरे ही अर्पण है। जो कुछ करता है सो ब्रह्म ही करता है, मैं कुछ नहीं करता हूँ ' – इस भावना पूर्ण विधि को तत्वदर्शी ऋषियों ने ' ब्रह्मार्पण कर्म ' कहा है।'

यद्वा फलानां संन्यासं प्रकुर्यात् परमेश्वरे।

कर्मणामेतदप्याहुब्रह्मार्पण मनुत्तमम् ।।

'अथवा कर्मो के फलों को परमेश्वर के निमित्त अर्पण करदे – यह भी श्रेष्ट' ब्रह्मार्पण' है।' भाष्यकार ने जो' ईश्वर – प्रणिधान की व्याख्या की है उसके दो अङ्ग हैं –

(1). ईश्वर के प्रति सम्पूर्ण कर्मो को समर्पण करना,

(2). कर्मफल त्याग ।

आनन्द कन्द भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कर्मफल त्याग या कर्मफल संन्यास को ही सर्व श्रेष्ठ आलम्बन बताते हुए कर्मफल के त्यागने वाले को 'त्यागी' 'योगी' और 'सन्यासी' कहा है –

संक्षेप में 'ईश्वर–प्रणिधान' योगाभ्यास की प्रथम वर्णाक्षरी है, इसके द्वारा अन्य साधन के अभ्यास में भी दृढ़ता आती है।

● ● ●

सिद्धयोग के आजीवन ग्राहकों से विनम्र–निवेदन

सिद्धयोग के आजीवन सदस्यों से विनम्र निवेदन है कि जिन्होंने सन् 2002 से पूर्व शुल्क जमा किया है उनका शुल्क समाप्त हो चुका है। अतः पुनः वे 1000 रू. जमा कर अपनी सदस्यता को चालू रखें। यदि शुल्क जमा नहीं किया जाता है तो उनकी पत्रिका रोक दी जायेगी। अतः सभी ग्राहक बन्धु इस बात पर गौर करें।

जय गुरुदेव की !

– प्रबन्धक / सम्पादक
सिद्धयोग मासिक
श्री सिद्धगुफा संवाई
एत्मादपुर, आगरा

।। श्री रामलाल प्रभवे नमः।। ।। सद्गुरुदेवाय नमः।।

श्री रामनवमी महोत्सव व श्री प्रभुजी की जयन्ती समारोह

सभी गुरु भाई और बहिनों को यह सूचित करते हुए अपार हर्ष हो रहा है कि इस वर्ष श्री प्रभुजी की पावन जयन्ती, श्री राम नवमी महोत्सव 26, 27 व 28 मार्च तदनुसार बृहस्पति, शुक्र व शनिवार को श्री सिद्धगुफा सवाई धाम में मनाया जाना निश्चित हो चुका है।

अतः प्रभु भक्तों से निवेदन है कि उक्त तिथियों में धाम में आकर सत्संग लाभ लें तथा गुरु-कृपा भाजन बनें।

जय गुरुदेव की!

निवेदक
सभी आश्रमवासी सन्तगण
श्री सिद्धगुफा सवाई,
आगरा

●●●

अथर्व वेद

ब्रह्मचर्येण तप सा देवा मृत्युमुपाघ्नत्।
इन्द्रोह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वरा भरत्।।

ब्रह्मचर्य का पालन और तपस्या करके देव पुरुषों ने मृत्यु को मार भगाया है। ब्रह्मचर्य का पालन कर यह जीवात्मा इन्द्रियों से दुर्लभ सुख को प्राप्त करता है।

विमर्श – जीवात्मा अपने कर्मों का शुभाशुभ फल भोगने के लिए, नाना प्रकार की ***योनियों में बार-बार जन्म लेता है और मरता है।*** मनुष्य योनि में वह फल भोगने के साथ ही नया कर्म भी करता है जबकि इस योनि के अलावा ***अन्य सभी योनियों में जीवात्मा सिर्फ पूर्व कर्मों का फल भोगता है नया कर्म नहीं करता।*** ऐसी दुर्लभ और अत्यन्त उपयोगी मनुष्य योनि का समय, नाना प्रकार के विषयभोग और कुकर्मों को करने में उलझा रह कर, बेकार व्यतीत कर देता है और ***इन कर्मों का फल भोगने के लिए विभिन्न योनियों में भटकता रहता है।*** इस मनुष्य जीवन का सदुपयोग करने, उचित उपभोग करने और अच्छे कर्म पर आत्मोन्नति करने के लिए हमें ब्रह्मचर्य का पालन और व्यायाम का नियमित अभ्यास अवश्य करना चाहिए ताकि हम इस जीवन में लम्बे समय तक स्वस्थ और बलवान बने रह सकें और शुभ कर्म करते रह सकें।

SIDDHYOG P

... मान्
भावसम्पन्न पुरुष अपने (सब कर्मों द्वारा सर्वत्र सदा) मेरा ही भजन
सेवन करते हैं।

संस्थापक:- योगयो...
राष्ट्रीय ब्लॉक एवं ...
प्रकाशित। आ...